उदारवादी साहित्य

(THE LITERATURE OF LIBERTY)

टॉम जी पामर

प्रस्तावनाः

यह संकलन उदारवादी विचारों की एक बेहतरीन प्रस्तुति है, पर कोई भी लेखन उदारवाद की गहराई या उन समस्त समस्याओं के साथ जिन पर उदारवादी अंत:दृष्टि प्रकाश डाल सके या व्यावहारिक हल निकाल सके, न्याय नहीं कर सकता। इस संग्रह में उदारवादी परंपरा की मानक कृतियां उद्धरण के तौर पर या समग्र रूप में शामिल हैं। यह छोटी निर्देशिका मुख्य पुस्तक का परिशिष्ट है जिसका उद्देश्य ऐसे पाठकों की मदद करना है जो उदारवाद के आधार, निहितार्थ और आश्वासनों को गहराई से जानने की इच्छा रखते हैं। (मौटे तौर पर मैंने उन कृतियों की सूची नहीं तैयार की है जो प्रस्तुत सामग्री में पहले से ही दर्शाए गए हैं, फिर भी उद्धरणों को पूरा पढ़ना आवश्यक है।) उन कृतियों के अतिरिक्त, जिन्होंने उदारवाद के विकास में योगदान किया है या जो उदारवादी नजरिये से लिखी गई हैं, मैंने प्लेटो के स्वैच्छिक सामाजिक संगठन की समीक्षा से लेकर समकालिक रूढ़िवादी,समाजवादी और सामाजिक लोकतांत्रिक समालोचनाओं तक कुछ समसामयिक और कालजयी कृतियों का भी समावेश किया है जिसमें उदारवादी दृष्टिकोण के प्रति समीक्षात्मक अभिव्यक्ति दिखाई देती है।

उदारवाद - एक समालोचना

देखा जाए तो आज उदारवाद नैतिक सिद्धांत, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास और अन्य मानव विज्ञानों में मौजूद समस्त बहसों, साथ ही साथ पूरे विश्व में दिख रहे प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्षो का वस्तुतः केन्द्रीय विषय है। यहां पर महत्वपूर्ण बात यह है कि हम इस तरफ न सिर्फ एक समर्थक के नजरिये से, बल्कि एक समालोचक की दृष्टि से भी देखें।

इस तरह की ग्रंथवृत्तात्मक कुंजिका (bibliographical guide) को किसी भी तरीके से व्यवस्थित किया जा सकता है- कालानुक्रमिक/ऐतिहासिक (chronological/historical), कथ्यपरक (thematic), विचारपद्धतियों या देशों के क्रम में। हर एक तरीके की अपनी अलग खासियत है।

विषय सामग्री का वर्गीकरण

मैंने इस निर्देशिका को इस तरह से क्रमबद्ध किया है कि सबसे पहले विषय से संबंधित मुख्य समीक्षा पाठक के समक्ष होगी। उसके बाद उसे ज्यादा विशिष्ट मुद्दों की तह तक जाने का अवसर मिलेगा। इसी के साथ मैंने विषय सामग्री को आठ श्रेणियों में बांटा है:

1. उदारवाद पर समसामयिक या अपेक्षाकृत नई सामान्य रचनाएं
2. उदारवादी दृष्टिकोण से सभ्यता का इतिहास
3. अहार्य वैयक्तिक अधिकार
4. सहज व्यवस्था
5. मुक्त बाजार और स्वैच्छिक संगठन
6. न्याय और राजनीतिक संगठन
7. हिंसा और राज्य
8. ऐसी पारंपरिक और समकालीन कृतियां जिनमें प्रत्यक्ष रूप से उदारवाद की आलोचना की गई है।

यहां विषयगत वर्गीकरण थोड़े मनमाने ढंग से किया गया है, कारण यह है कि यहां उल्लिखित कई विचार एक-दूसरे को परस्पर सुदृढ़ करते हैं और किसी एक ही किताब या लेख में उनका निरूपण नजर आ सकता है।

निर्णय पाठकों का

अंत में मैं उदारवाद के समीक्षकों के विचारों को रख रहा हूं ताकि पाठक इन मुद्दों को कम से कम दो परिप्रेक्ष्य में देखने का अवसर प्राप्त कर सकें, पहला कि वे कुछेक कठिन समस्याओं के जरिये चिंतन कर सकें और दूसरा, वे स्वयं यह निर्णय ले सकें कि उन्हें कौन से तर्क सबसे उपयुक्त लग रहे हैं। किसी भी एक दृष्टिकोण से समस्त प्रश्नों के उत्तर नहीं मिल सकते और न ही सारे रुचिकर या महत्वपूर्ण सवालों के कोश प्रस्तुत किये जा सकते है,बल्कि अन्य मतों के साथ किए गए संवाद- समालोचना और गहन विचारमंथन के जरिये- ही उदारवाद का विकास और विस्तार संभव है और इसी पथ पर बढ़ते हुए एक बेहतर, ज्यादा स्वतंत्र, ज्यादा शांतिपूर्ण, समृद्ध और न्यायप्रधान विश्व का निर्माण हो सकता है।

विभिन्न दृष्टिकोण

जो पाठक प्रत्येक सवाल का प्रामाणिक हल एकबारगी और चिरस्थायी रूप से प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें कुछ हद तक निराशा हाथ लगेगी क्योंकि यहां उल्लेखित लेखकों में सभी सारे प्रश्नों पर एकमत नहीं हैं और सबसे दिलचस्प कृतियों में कई कृतियां ऐसी हैं जो अन्य उदारवादी या पुराने उदार लेखकों की समीक्षा के रूप में लिखी गई हैं। उदारवादी नजरिये की सबसे बड़ी खूबी और संपत्ति के अहार्य अधिकारों की अहमियत और उपयोगिता पर मौटे तौर पर सर्वसहमति है, फिर भी उदारवाद मानक उत्तरों की फेहरिस्त मात्र नहीं, बल्कि विचारशील और सृजनात्मक प्रकृति के लोगों के लिए उर्जा से ओत-प्रोत उत्साहवर्धक धरातल है।

आधुनिक उदारवाद जिस तरह नैतिक और वैज्ञानिक तरीके से संसार में नई विचारधारा की आभा बिखेर रहा है वह इसकी सबसे बड़ी विशेषता हे। शांति और स्वैच्छिक सहयोग की नैतिक अनिवार्यताएं ऐसे स्वैच्छिक सहयोग से बनी सहज व्यवस्था का और उन प्रवृत्तियों का, जो बलात् हस्तक्षेप से दुनिया को उथल-पुथल कर अनचाहे परिणामों की जटिल श्रृंखला का सूत्रपात करती हैं, गहराई से आकलन करने के बाद संयोजित की गई हैं।

स्वीकारोक्ति

यह निर्देशिका निश्चित रूप से थोड़ी बिखरी हुई लगेगी- जो पिछले कई वर्षो के मेरे अध्ययन और रुचियों का प्रतिबिंब है, जिन्होंने मेरा मार्गदर्शन किया है- और निश्चित तौर पर पूर्ण नहीं लगेगी। मेरा ख्याल है कि मुझे अपने पाठकों की आपत्तियों का सामना भी करना पड़ सकता है क्योंकि वे इन बातों की शिकायत जरूर कर सकते हैं कि जिन रचनाओं को इस संकलन से हटा दिया गया, वे शामिल किए गए अंशों की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तथा महत्वपूर्ण या 'ज्यादा उदारवादी' थीं। इन महत्वपूर्ण कृतियों की अनुपस्थिति के लिए मैं जगह की कमी की बात कह कर क्षमा चाहूंगा। और शामिल किए गए अंशों पर उठे इन सवालों कि वे उदारवादी सामग्री के साथ 'मेल' नहीं खाते के जवाब में मैं दिवंगत हेनरी हेजलिट, जो 'न्यूयॉर्क टाइम्स' के पूर्व आर्थिक संपादक, 'न्यूजवीक' के स्तंभकार तथा एक अत्यंत प्रभावी पुस्तक 'इकोनॉमिक्स इन वन लाईन' के लेखक थे, के उन विचारों जरिये दूंगा जो उन्होंने उदारवाद की अपनी ही पुस्तक तालिका, 'दि फ्री मैन्स लाइब्रेरी (प्रिंस्टन, न्यू जर्सी: वन नास्ट्रैन्ड,1956)' में अभिव्यक्त किए हैं।

मैं इस तरह की आपत्तियों का यथासंभव पहले से ही जवाब देने के प्रयास में यह कहना चाहूंगा कि इस पुस्तक तालिका में किसी किताब को शामिल करने का यह मतलब कतई नहीं है कि मैं उस किताब के हर वाक्य या हर सिद्धांत से सहमत हूं या मैं यह मानता हूं कि इसमें प्रतिपादित किया गया प्रत्येक मत उदारवादी या व्यक्तिवादी परंपरा का आवश्यक हिस्सा है। बल्कि इन मतों को इस पुस्तक में शामिल किया जाना इस बात का द्योतक है कि यह किताब व्यक्तिवादी दर्शन में विशुद्ध रूप से एक तथ्यपरक या सैद्धांतिक योगदान करेगी और कम से कम कुछ पाठकों को इसकी मदद से उस दर्शन को पूरी तरह से समझने की दृष्टि प्राप्त होगी या सहायता मिलेगी। (पी.पी. 7-8)

ग्रंथसूची (bibliography) और सामग्री

इसकी दूसरी वजह कुछ हद तक यह भी है कि यह ग्रंथसूची हैजलिट की ग्रंथसूची जिसमें 550 किताबें मौजूद हैं, से काफी छोटी है और मैंने चयन के लिए ज्यादा सूक्ष्म कसौटी निर्धारित की है और उनकी 1956 की सूची में विद्यमान सर्वाधिकारवाद की कई समालोचनाओं को शामिल नहीं किया। यह वह समय था जब सर्वाधिकारवादी राज्य (totalitarianism) पर खतरा बनकर खड़ा था। इस संग्रह को तरह से अंग्रेजी में उपलब्ध सामग्री की मदद से तैयार किया गया है। यह सामग्री इतनी विस्तृत नहीं है फिर भी जो पाठक इसे पढ़ना चाहेंगे और इस पर आगे अध्ययन करना चाहेंगे वे पाएंगे कि हर पुस्तक या लेख की कड़ी अन्य कृतियों से जुड़ रही है।’

1. उदारवाद पर रचनाएं

रॉथबार्ड का मैनिफैस्टो

दिवंगत मॅरे एन. रॉथबार्ड (Murray N. Rothbard) नि:संदेह इस सदी के सबसे प्रतिभाशाली उदारवादी लेखक थे जिनकी लेखनी अर्थशास्त्र के विशेषज्ञ के तौर पर उनके प्रबुद्ध विचारों को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ राजनीति विज्ञान, नीतिशास्त्र, इतिहास, अन्तर्राष्ट्रीय मामलों और अन्य विषयों पर भी अविराम दक्षता के साथ चलती थी। 1970 के दशक में उन्हें उदारवाद पर एक “घोषणा-पत्र” लिखने का ख्याल आया जो ‘फॉर ए न्यू लिबर्टी’ और ‘दि लिबर्टेरियन मैनिफेस्टो’ (द्वितीय संस्करण, न्यूयॉर्क: मैकमिलन, 1978) के नाम से दो संस्करणों में छपा। यह किताब उदारवाद के वैश्विक दृष्टिकोण के व्यापक स्वरूप को दर्शाती है, हालांकि सार्वजनिक नीति से जुडे विषयों एवं संगठित उदारवादी आंदोलन पर

लिखे गए अध्याय आज थोड़े पुराने लगते हैं। रॉथबार्ड ने 1950 और 1960 के दशकों में कई लेख और किताबें प्रकाशित करवाई थीं, जिनमें राज्य की वैधता पर सवाल खड़े किए गए थे (अमेरिकी अंग्रेजी में आमतौर पर स्टेट (state) का अर्थ होता है- "सरकार" (government) हालांकि यह 'स्वैच्छिक सरकार' के असंभव होने की ओर इशारा करता है, जिसका रॉथबार्ड ने समर्थन किया था)।

उदारवाद पर विशेष पुस्तक

प्रबुद्ध दार्शनिक रॉबर्ट नॉजिक (Robert Nozick) ने रॉथबार्ड के तर्कों को राज्य की वैधता के विरुद्ध एक सशक्त विषय के रूप में देखा और रॉथबार्ड की चुनौती से प्रभावित होकर पूर्ण रूप से परिसीमित राज्य का बचाव करने के उद्देश्य से एक किताब लिखीः जिसका नाम है 'अनार्की, स्टेट ऐंड यूटोपिया' (Anarchy, State, and Utopia) (न्यूयॉर्कः बेसिक बुक्स, 1974) जिसे जबरदस्त सफलता मिली। हालांकि देखा जाए तो यह किताब पूर्ण रूप से 'उदारवाद पर लिखी गई आम किताब' नहीं है. फिर भी नॉजिक की इस कृति को शिक्षाविदों ने एक मानक का दर्जा दिया है. आमतौर पर वे अपने विद्यार्थियों को उदारवादी विचारधारा की व्यापक परंपरा और उस ज्ञान भंडार, जिसके आधार पर नॉजिक की लेखनी ने यह आकार ग्रहण किया, की संक्षिप्त विवेचना के साथ इसे उदारवाद पर लिखी गई एक 'विशेष पुस्तक' बता कर सौंपते हैं।

लोगों के अधिकार और राज्य की भूमिका

नॉजिक ने अपनी रचना की शुरुआत एक सुस्पष्ट धारणा के साथ की है जो 'अनार्की, स्टेट एंड यूटोपिया' के प्रथम वाक्य में ही व्यक्त हुई है. "सभी व्यक्तियों को अधिकार प्राप्त हैं और कुछ ऐसी चीजें हैं जिन्हें कोई भी व्यक्ति या समूह उनके साथ प्रयुक्त नहीं कर सकता (उन अधिकारों का हनन किए बगैर)". उनकी यह मान्यता रॉथबार्ड और अन्य उदारवादी विचारकों से मेल खाती है। उसके बाद वे इस सवाल कि "वैयक्तिक अधिकार राज्य के हिस्से में कितनी गुंजाइश छोड़ी है?" का हल निकालने का प्रयास करते हैं. इस पर उनका जवाब है- बहुत ही सीमित राज्य (लिमिटेड स्टेट), जो व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा के लिए तत्पर है, वैध है और वैयक्तिक अधिकारों के प्रति एकरूप है। लिमिटेड स्टेट का (पूरी तरह) बचाव करने की प्रक्रिया में नॉजिक ने अपनी इस सशक्त पुस्तक में कई विचारोत्तेजक बिन्दुओं को उठाया है.

रॉल पर की गई टिप्पणियां

जॉन रॉल (John Rawl) की तत्कालीन नई पुस्तक 'ए थ्योरी ऑफ जस्टिस (कैम्ब्रिज, मासः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,1971)', जो पुनर्वितरणात्मक कल्याणकारी राज्य (redistributive welfare state) के बचाव में लिखी गई एक बेहद सराहनीय पुस्तक थी और जिसे जबरदस्त सफलता मिल रही थी. नॉजिक ने इसकी सीधे शब्दों में कड़ी समीक्षा की। रॉल पर की गई टिप्पणियों और उनकी तेजस्विता के कारण नॉजिक की कृति को शिक्षाविदों और राजनीतिक सिद्धांतशास्त्रियों ने बहुत ही गंभीरता से लिया था। उनमें से कई ऐसे विद्वान थे जिन्होंने समकालीन उदारवादी (या क्लासिकल उदार) रचनाओं को पढ़ा तक नहीं था तथा इस कृति को ही उदारदवाद की एकमात्र उपलब्ध सामग्री समझते थे।

थॉमस नैजेल का विरोध

चूंकि नॉजिक लिमिटेड स्टेट के बचाव में लिख रहे थे और अपनी इस शुरुआती धारणा कि 'सभी व्यक्तियों को अधिकार प्राप्त है', के औचित्य को वह सिद्ध नहीं कर पाए थे अतः कुछ शिक्षाविदों ने उदारवाद को दार्शनिक थॉमस नैजेल (Thomas Nagel) के शब्दों में 'आधारहीन' बताते हुए खारिज कर दिया था। लेकिन इस किताब के प्रयोजन के बारे में इस सुस्पष्ट कथन के मद्देनजर यह आलोचना गलत नजर आती है। दरअसल इसका इशारा अन्य पुस्तकों की ओर होना चाहिए था जो और दलीलों को प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही थीं। (मेरे अन्य समकालीन विचारकों ने वैयक्तिक अधिकारों के मसले को उचित ठहराने का जिम्मा ले लिया था, मैं जल्दी ही उनमें से कुछ नाम आपके सामने पेश करूंगा।)

आएन रैंड के लेख

उदारवाद की प्रचलित रचनाओं की सूची बनाते समय सुप्रसिद्ध उपन्यासकार-विचारक आएन रैंड (Ayn Rand) के अत्यंत लोकप्रिय लेखों को शामिल करना निश्चित रूप से जरूरी लगता है। उनकी कुछ बेहतरीन रचनाएं 'क्युट्युजिस्मः द अननोन आइडियल' (CupituZism: The Unknown Ideal) (न्यूयॉर्कः न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी, 1966) नामक संकलन में मौजूद है जिसमें उनके तीन सहयोगियों (मनोशास्त्री नाथेनील ब्रान्डेन, इतिहासकार रॉबर्ट टेसेन तथा वर्तमान फेडरल रिजर्व चेयरमैन एलेन ग्रीन्सपॅन) के लेखों को भी संकलित किया गया है। एक सशक्त और नाटकीय भाषा में प्रस्तुत ये लेख रैंड के राजनीतिक दर्शन की संयोजना के प्रयास को दर्शाते हैं। रैंड की अधिकतर पुस्तकों, जिनमें लोकप्रिय संस्कृतियों, कला, निजी नैतिकता, आधिभौतिक सत्य और ज्ञान मीमांसा को पेश किया गया है और अन्य सभी विषयों जिन्हें रैंड की प्रज्ञावान दृष्टि ने गहराई से खंगाला है, से सर्वर्था अलग इस संकलन के लेख ज्यादा सूक्ष्म रूप से राजनीतिक और उदारवादी हैं।

रैंड का दर्शन और खूबियां

रैंड के राजनीतिक दर्शन के विकास पर अमेरिकी उदारवादी लेखकों इसाबेल पैटर्सन और रोज वाइल्डर लेन, साथ ही ऑस्ट्रियाई शाखा के अर्थशास्त्री लुडविग वॉन मिसेस के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था (यह बात ध्यान देने योग्य है कि रैंड की नाटकीय शैली- जो किसी भी कलाकार के लिए बेहद महत्वपूर्ण होती है- कभी-कभी जरूरत से ज्यादा सरल हो जाती है जैसा कि 'बड़े कारोबार' को उन्होंने बतौर 'अमेरिका का उत्पीड़ित अल्पसंख्यक' प्रस्तुत किया है, कारोबार से जुडे लोगों को बलि का बकरा, जैसा कि नेशनल सोशलिस्ट जर्मनी में यहुदियों के साथ हो रहा था, बनने से बचाने के प्रयासों या अपने देश रूस में 'बुजुरुआ' के मुद्दे, पर उन्हें 'धंधे' में लगे कई लोगों के प्रयास को हाशिये पर डालना पड़ा ताकि उनके प्रतिस्पर्धियों की गतिविधियों पर लगाम कसी जा सके और राज्य की विशेष कृपा प्राप्त हो। ऐसे कृपा-आकांक्षी कारोबारियों के प्रति उनके मन में बस घृणा भरी थी।) रैंड के नजरिये की एक और खूबी, जो पिछली अनेक विचारधाराओं से इसे अलग करती है, और जो निश्चित तौर पर इस लेख संकलन का प्रधान गुण है, यह है कि उन्होंने स्वैच्छिक सहयोग और आदान-प्रदान पर आधारित अर्थव्यवस्था का एक सर्वथा भिन्न 'नैतिक' बचाव प्रस्तुत किया था। ऐसा नहीं था कि समाजवाद के लिए लोग 'पर्याप्त' नहीं थे, बल्कि समाजवाद लोगों के लिए पर्याप्त नहीं था।

मिसेस और हयाक का योगदान

आधुनिक उदारवादी दर्शन के विकास में दो ऑस्ट्रियाई लेखकों लुडविग वॉन मिसेस (Ludwig Von Mises) और एफ.ए. हयाक (F. A. Hayek) का योगदान उल्लेखनीय है। दोनों ने बीसवीं सदी में अधिनायकवाद रूपी नए खतरे के विरुद्ध उदारवाद की पुरानी परंपरा के बचाव में आवाज उठाई है। अपने सकारात्मक राजनीतिक दर्शन पर मिसेस ने 1927 में 'लिबरलिज्म' (Liberalism) (कन्सास सिटी, मो.: शीद, ऐन्ड्रयूज एंड मैकमील 1978) नामक किताब जर्मन भाषा में प्रकाशित कराई। हयाक, जिन्हें 1974 में अर्थशास्त्र के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया, ने अपनी कई किताबों में राजनीतिक मसलों से जुड़े अपने विचार व्यक्त किए हैं। उनकी सारी रचनाएं समग्र भाव से उनके राजनीतिक चिंतन के निरंतर विकास की प्रक्रिया को प्रस्तुत करती हैं। इनमें शामिल है उनकी बेहद प्रभावशाली पुस्तक 'दि रोड टू सर्फडम' (The Road to Serfdom) (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1944), जो नि:संदेह सदी के बौद्धिक और राजनीतिक बदलाव के एक अहम दौर को दर्शाती है, 'द कांस्टिट्यूशन ऑफ लिबर्टी' (The Constitution of Liberty) (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1960), और उनके तीन खंड

'लॉ', 'लेजिस्लेशन', ऐंड 'लिबर्टी' (Law, Legislation, and Liberty) (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1973, 1976, 1979)।

फ्रायडमॅन का योगदान

नोबेल पुरस्कार प्राप्त एक अन्य अर्थशास्त्री हैं मिल्टन फ्रायडमॅन जिनकी रचनाएं द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के उदारवादी आंदोलन के दौर में काफी गहरा प्रभाव डाल रही थीं। उन्होंने अपनी पत्नी रोज़ फ्रायडमॅन के साथ राज्य की उभरती शक्ति के कारण हो रहे स्वतंत्रता हनन पर काफी मुखरता से अपने विचार रखे हैं। मिल्टन फ्रायडमॅन की 'कैपिटलिज्म एंड फ्रीडम' (Capitalism and Freedom) (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1962) पुस्तक ने नई मिसाल कायम की थी, और रोज़ फ्रायडमॅन के साथ लिखी गई उनकी 'फ्री टू चूज़' (Free to Choose न्यूयॉर्क: हा: कोर्ट ब्रेस जोवानोविच, 1980) पुस्तक ने लाखों लोगों को उदारवादी विचारों से अवगत कराया और इसमें अहम भूमिका निभाई थी इस पुस्तक पर बने टेलीविजन कार्यक्रम ने।

उदारवाद का बचाव

राजनीतिशास्त्री नॉरमन बेरी की 'ऑन क्लासिकल लिबरलिज्म एंड लिबर्टेरियनिज्म' (On Classical Liberalism and Libertarianism) (न्यूयॉर्क: सेंट मार्टिन्स, 1987) बीसवीं सदी के लेखकों पर केंद्रित उदारवादी चिंतन का एक उपयोगी आकलन पेश करती है। उदारवाद को सशक्त और स्थिर आधारों पर खड़ा करने और विभिन्न आलोचनाओं से इसका बचाव करने का प्रयास दार्शनिक जन नैव्रेसन की 'दि लिबर्टेरियन आइडिया' (The Libertarian Idea) (फिलाडेल्फिया: टेम्पल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989) में नजर आता है। उदारवाद को एक सार्वभौम सत्य के रूप में उचित धरातल पर खड़ा करने की अथक मेहनत अर्थशास्त्री एंथनी डी जेसी की 'च्वाइस, कांट्रैक्ट, कंसेंट: ए रीस्टेटमेंट ऑफ लिबरिज्म' (Consent: A Restatement of Liberalism) (लंदन: इंस्टीट्यूट ऑफ इकोनॉमिक अफेयर्स, 1991), में नजर आती है। लॉ के प्रोफेसर रिचर्ड एप्सटाइन ने अपनी पुस्तक 'सिम्पल रूल्स फॉर ए कंप्लेक्स वर्ल्ड' (Simple Rulles for A Complex World) (कैम्ब्रिज, मास: हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995) में वास्तविक उदारवादी नजरिए के लिए कुछ जबरदस्त दलीलें प्रस्तुत की हैं और यह दर्शाया है कि वह किसे बचाव के योग्य समझते हैं, लेकिन इसके साथ ही उन्होंने उदारवाद के कठोर अवयवों को बड़ी सख्ती के साथ सीमाबद्ध भी किया है।

मचान के तीन उम्दा संकलन

उदारवादी चिंतन पर आपके समक्ष प्रस्तुत इस संकलन के अलावा कई अन्य संकलन भी उपलब्ध हैं, परंतु उनमें से अधिकतर में ऐसे व्यापक विस्तार या ऐतिहासिक आयामों का अभाव मिलेगा। बेहतरीन संग्रह की श्रृखंला, इनमें ज्यादातर संग्रह वे हैं जिनमें आखिरी कुछेक दशकों के लेखक विद्यमान हैं, में तीन सर्वश्रेष्ठ संकलन हैं जिनका संपादन दार्शनिक टाइबॉर मचान ने किया है जो साम्यवाद से घबरा कर भागे हुए हंगरी के शरणार्थी थे। उन पर आएन रैंड का गहरा प्रभाव पड़ा था। ये किताबें नीतिशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र, अंतर्राष्ट्रीय संबंध और सार्वजनिक नीति पर उदारवादी दृष्टिकोण से लिखे गए छोटे लेखों की आधार सामग्री के रूप में अत्यंत उपयोगी हैं। मचान द्वारा संपादित संग्रहों में हैं 'दि लिबर्टेरियन अल्टरनेटिव' (The Libertarian Alternative) (शिकागो: नेल्सन हॉल, 1973): 'दि लिबर्टेरियन रीडर' (The Libertarian Reader) (लैन्टम: रॉमन एंड लिटिलफील्ड, 1982), और डगलस बी. रासम्यूसेन के साथ संपादित 'लिबर्टी फॉर दि ट्वेन्टी फर्स्ट सेंचुरी' (Liberty for the 21st Century) (लैन्टम: रॉमन एंड लिटिलफील्ड, 1995).

चाइल्ड का विद्वत्तापूर्ण लेखनः

मैं यहां अपनी पसंद की एक पुस्तक 'लिबर्टी अगेन्स्ट पावर: एसेज़ बाय रॉय ए. चाइल्ड्स' (Liberty Against Power: Essays by Roy A. Childs Junior), जॉन कैनेडी टेलर, संस्करण (सैन फ्रांसिस्को: फॉक्स एंड विल्किस, 1994) का जिक्र करना चाहूंगा। लेखों का यह संग्रह उदारवादी चिंतक रॉय ए. चाइल्ड, जूनियर की विद्वत्ता का परिचायक है। इसमें उनकी पांडित्यपूर्ण रचनाएं, लोकप्रिय लेख, पत्रकारिता लेखनी, भाषण और समीक्षाएं शामिल हैं। चाइल्ड एक आत्मोपदेशक और स्वतंत्र विद्वान थे जिन्होंने कॉलेज में पढ़ाई नहीं की थी। उदारवादी विद्वानों की एक पूरी पीढ़ी, जिसमें कई आज जने-माने प्रोफेसर हैं, पर उन्होंने व्यापक प्रभाव डाला था और प्रबुद्ध शिक्षाविदों, संगीतकारों, व्यवसाइयों, पत्रकारों और राजनीतिकों के साथ लगातार एक विस्तृत और विद्वतापूर्ण संवाद बनाए रखा। (वह एक अलौकिक प्रतिभा के स्वामी थे और उनका व्यक्तित्व अद्भुत था। वह मेरे लिए एक प्रेरणास्रोत थे और उदारवादी विचारधारा वाले अन्य लोगों के लिए भी रहेंगे)। इस संस्करण की प्रस्तावना सुप्रसिद्ध उदारवादी मनोविश्लेषक थॉमस जश्ज (Thomas Szasz) ने लिखी है।

इसी प्रकार, उदारवादी चिंतन से रूबरू करवाने वाले लोकप्रिय रचनाएं हैं- 'लिबर्टेरियनिज्म: ए प्राइमर' (Libertarianism: A Primer, न्यूयॉर्क: दि फ्री प्रेस, 1997), द्वारा डेविड बोज और काटो इंस्टीट्यूट के

कार्यकारी उपाध्यक्ष और इस संस्करण के संपादक और समाजशास्त्री चार्ल्स मरे द्वारा लिखित 'व्हाट इट मीन्स टू बी ए लिबर्टेरियन: ए पर्सनल इन्टरप्रेटेशन' (Libertarian: A Personul Interpretation) न्यूयॉर्क: ब्रॉडवे बुक्स, 1997).

उदारवादी परिप्रेक्ष्य से सभ्यता का इतिहास

लॉर्ड ऐक्टन का योगदान

आधुनिक सभ्यता के इतिहास को समझने का एक रास्ता यह है कि इसे आजादी और ताकत के बीच चल रहे सतत संघर्ष के रूप में देखा जाए। इतिहासकार जॉन एमरिच एडवर्ड डैलबर्ग- ऐक्टन (John Emerich Edward Dalberg- Acton), जिन्हें लॉर्ड ऐक्टन के नाम से जाना जाता है, ने कुछ इसी तरह के विचार व्यक्त किए हैं। उनकी रचनाओं के साथ ही साथ सुरचित जीवनियों के कई संस्करण उपलब्ध हैं। कैसा विरोधाभास है कि अपनी उत्कृष्ट लेखन सामर्थ्य और विस्तृत ज्ञान भंडार के बावजूद (उन्होंने अपने जीवन में हजारों किताबें पढ़ीं और उन पर टिप्पणी लेखन किया, साथ ही वे कई भाषाओं के जानकार भी थे।) ऐक्टन ने कभी कोई पुस्तक नहीं लिखी शायद श्रेष्ठ से ऊपर, सर्वश्रेष्ठ स्तर तक पहुंचने की एक प्यास उनके अंदर हमेशा बनी रही. इस वजह से जब भी उनके मन मे कुछ लिखने या उसे प्रकाशित करने का भाव जागता होगा, उनके मस्तिष्क में यह बात आती होगी कि अभी और भी कुछ सीखना बाकि है। इस तरह उनकी योजना में सांस लेता उदारवाद के उत्तम इतिहास को 'सर्वोत्तम इतिहास जो कभी लिखा नहीं गया' के रूप में इंगित किया जाता है, परंतु उनके द्वारा संकलित लेख और समीक्षाएं अनेक संस्करणों में निकलती रहती हैं। खासकर 'नेशनैलिटी' (Nationality), 'दि हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम इन ऐन्टिक्विटी' (The History of Freedom in Antiquity), 'दि हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम इन क्रिस्चियनिटी' (The History of Freedom in Christianity), पर उनके लेख तथा 'इनॉगरल लेक्चर ऑन दि स्टडी ऑफ हिस्ट्री' (Inaugural Lecture on the Study of History) व्याख्यान उल्लेखनीय हैं। ये सब रचनाएं जे. रफस फीअर्स (J. Rufus Fears) द्वारा संपादित नए संस्करण, 'सिलेक्टेड राइटिंग्स ऑफ लार्ड ऐक्टन (Selected Writings of Lord Acton), खंड: एसेज़ इन दि हिस्ट्री ऑफ लिबर्टी' (Essays in the History Of Liberty), (इंडियाना पोलिस: लिबर्टी क्लासिक्स, 1985) में उपलब्ध हैं।

स्वतंत्रता और शक्ति के बीच संघर्ष

ऐक्टन ने ही हजारों सालों के इतिहास का अध्ययन करने के बाद सारांश में यह कहा है कि 'शक्ति मनुष्य को भ्रष्ट आचरण की ओर प्रवृत्त करती है और निरंकुश शक्ति पूर्णतः भ्रष्ट बना डालती है' - उनकी यह पंक्ति आज तक सुप्रसिद्ध है। इतिहास को स्वतंत्रता तथा शक्ति के बीच चल रहा संघर्ष मानते हुए मशहूर समाजशास्त्री अलेक्जेंडर रस्टो (Alexander Rustow) ने अपनी एक रचना में इसे व्यापक रूप से प्रस्तुत किया है। उन्होंने जर्मनी में राष्ट्रीय समाजवादियों का विरोध किया था और उसके बाद जब हिटलर ने महाद्वीपीय यूरोपीय उदारवाद के अंतिम अवशेषों का भी खात्मा कर डाला तो वे देश छोड़ कर निकल आए थे। जर्मनी से बाहर रहते हुए रस्टो ने इस तथ्य को जानने का गहन प्रयास किया कि जर्मनी जैसे सभ्य देश में समूहवाद की पाशविकता कैसे उभर सकती है और इसके परिणामस्वरूप समाज सिद्धान्त पर एक वृहत रचना सामने आई जिसका संक्षेपण और संपादन उनके पुत्र डैंक्वार्ट रस्टो (Dankwart Rustow) ने किया और उसे 'फ्रीडम एंड डॉमिनेशन: ए हिस्टोरिकल क्रिटिक ऑफ सिविलाइजेशन' (Freedom and Domination: A Historical Critiqive of Civilization) (प्रिंस्टन, न्यू जर्सी: प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1980) नाम से अंग्रेजी में प्रकाशित किया।

ऐक्टन या रस्टो की शैली से पूरी तरह अलग चिंतन-तत्वों पर आधारित दृष्टिकोण 19वीं सदी के जर्मन विधि इतिहासकार ऑटो वॉन (हालांकि उन्होंने इन दोनों को प्रभावित किया था) की रचनाओं में प्रकट होता है। उन्होंने साहचर्य (Genossenschaft) और प्रभुत्व या स्वामित्व के सिद्धांतों के बीच अंतर ढूंढा और यह पाया कि आधुनिक सामाजिक संबंधों को आकार देने में दोनों की ही भूमिका है। उनकी रचनाओं का एक अच्छा संकलन एंटनी ब्लैक द्वारा संपादित 'कम्यूनिटी इन हिस्टोरिकल पर्सपेक्टिव'(Commuity in Historical Perspective) (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1990), में उपलब्ध है।

समाज से भिन्न राज्य

उपरोक्त सभी विवरणों में समाज को राज्य से भिन्न माना गया है, जो हिंसा, विजय और प्रभुसत्ता का परिणाम है। उदारवादी चिंतक इन खूबियों को विधि नियम, वैयक्तिक अधिकार और धैर्य के रूप में देखते हैं। वे शांति को सत्ता के विरुद्ध चले लंबे संघर्ष में विजय के रूप में. संस्थाओं जैसे प्रतिनिधि सरकार, शक्तियों का पृथक्करण, कानून की नजर में सभी का समान होना और स्वतंत्र न्यायालयों को ऐसे साधनों के रूप में देखते हैं जो राज्य की लूट और प्रभुसत्ता की एक व्यवस्थित प्रणाली- को खुद ही कानून के दायरे में ले आते हैं।

इतिहास के मायने

जिस तरह राष्ट्रों का इतिहास होता है (दरअसल ज्यादातर लोगों की धारणा यह है कि 'इतिहास' का अर्थ सत्ता, राजाओं-रानियों, दरबारों, युद्धों, मुठभेड़ों और विजय गाथाओं का इतिवृत मात्र है) वैसे ही नागरिकों, समाज, बाजार, कानून और संपत्ति, उत्पादक कार्य तथा मुद्रा विनिमय और स्वैच्छिक सहयोग का भी इतिहास होता है। शुरुआत करने के लिए सबसे अच्छा होगा बर्बर विजय के बाद यूरोप में व्यावसायिक सभ्यता के उत्थान के इतिहास को जानना, जो हेनरी पाइरीन की कृतियों में मिलता है, खासकर उनकी उल्लेखनीय पुस्तक 'मिडिएवल सिटीजः देयर ऑरिजिन्स एंड दि ग्रोथ ऑफ ट्रेड' (1925: प्रिन्सटनः प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस,1974)।

व्यावसायिक समाज के उद्भव और उत्थान की विवेचना कई किताबों में मिलती है। उनमें से दो पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। राबर्ट एस. लोपेज की “दि कमर्शियल रिवोल्यूशन ऑफ मिडिल एजेज़ 950-1350" (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1976) और जॉन ब्रूअर और रॉय पॉर्टर द्वारा संपादित “कंजम्प्शन ऐंड दि वर्ल्ड ऑफ गुड्स” (लंदनः रूटलेड्ज, 1996)। जबकि 'पूंजीवाद' के अभ्युदय का बेहद परिष्कृत और सहज निरूपण नाथान रोजेनबर्ग एवं एल.ई. बर्डजेल, जूनियर, की “हाउ दि वेस्ट ग्रू रिच” (न्यूयार्कः बेसिक बुक, 1986) पुस्तक में मिलता है।

इसी तरह नागरिक समाज के अभ्युदय या आधुनिक 'पूंजीवाद' के विस्तारित क्रम के विवरण ई.एल. जोन्स की रचना "दि यूरोपियन मिरेकल" (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1981) में मिलते हैं, जो यूरोप में सत्ता के आमूल परिवर्तनकारी विघटन में यूरोपीय आर्थिक और विधिक प्रगति के स्रोत की पहचान कराती है, और हयाक की आखिरी पुस्तक ' दि फेटल कन्सीटः दि एरर्स ऑफ सोशलीज़्म' (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1988) उदार सभ्यता के उदय का व्यापक दृश्य पेश करती है। इन वृतांतों की पहली विशेषता यह है कि इन्होंने शक्ति के विघटन द्वारा आधुनिक स्वातंत्र्य के विकास में भूमिका निभाई है। राजनीतिक विघटन तथा व्यावसायिक सभ्यता (चल संपत्ति के साथ, जैसा कि इस संकलन बेंजामिन कान्सटैंट ने शामिल अपने लेख में जोर देकर कहा है) किसी दमनकारी राजनीतिक परिस्थिति से किसी व्यीक्ति के बाहर मात्र निकलने की कीमत को कम कर देते हैं क्योंकि लोग एक राजनीतिक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था की ओर पलायन कर सकते हैं, शासकों और संभावित शासकों को परस्पर प्रतिस्पर्धा में जीतना पड़ता है ताकि वे अपने लिए करदाताओं का एक आधार तैयार कर सकें या उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर सकें। इसके अतिरिक्त, यूरोप में किसी एक क्षेत्र की राजनीतिक सत्ता शायद ही ऐकिक थी बल्कि यहां आमतौर पर चर्च और धर्मनिरपेक्ष प्रभुसत्ताओं द्वारा अक्सर साझा स्वरूप (और विवादग्रस्त) में दिखती रही थी जबकि विश्व के अन्य हिस्सों में ऐसी स्थिति नहीं थी।

वहां राजा महापुरोहित के पद का दावेदार था या स्वयं को ईश्वर की पदवी का हकदार समझता था। यह एक ऐसी बात थी जिसे यहूदी-ईसाई जगत में सोचा भी नहीं जा सकता था। यूरोप में चर्च और सत्ता में तथा विभिन्न धर्मनिरपेक्ष शक्तियों के बीच ऐसी प्रतिस्पर्धा की वजह से भिन्न बलों के बीच की 'क्षेत्राधिकारगत दरारों' में स्वातंत्र्य को पनपने का अवसर मिल रहा था और लोगों को एक-दूसरे के विरुद्ध शक्ति प्रदर्शन का मौका मिल रहा था जो आमतौर पर वैयक्तिक अधिकारों की रक्षा को और दृढ़ ही कर रहा था। विधि इतिहासकार हारोल्ड बर्मन की ''लॉ एंड रिवोल्यूशन: दि फार्मेशन ऑफ दि वेस्टर्न लीगल ट्रेडिशन'' (कैम्ब्रिज, मास: हार्वर्ड यूनिवर्सिटी, प्रेस, 1983)पुस्तक में 'विधिक बहुलवाद' और 'क्षेत्राधिकार दरारों' के इस इतिहास को अत्यंत उत्कृष्टता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

अहार्य वैयक्तिक अधिकार

अधिकारों का स्रोत या औचित्य उदारवादी चिंतकों के लिए हमेशा ही विवादास्पद विषय रहा है। किसी व्यक्ति को किस प्रकार अधिकार प्रदान किए जाएं- उपयोगिता के आधार पर, विशुद्ध तर्क प्रेरित मांगों के साथ उनकी संबद्धता के आधार पर, दैवी निर्देश या किन्हीं अन्य कारणों से- बेशक खास नीति विषयक मसलों पर हो रहे विचार-विमर्शों में यह तथ्य मायने रखता है, परंतु विभिन्न प्रकार के औचित्यों के किसी आम निष्कर्ष पर पहुंचने को एक समस्या के रूप में देखने के बजाय मैं उसे एक 'असफल-सुरक्षित' प्रक्रिया के रूप में देखना चाहूंगा: यदि कुछ भिन्न अस्थिर तर्क एक ही निर्णय पर पहुंचते हैं, तो हम इसकी सच्चाई को लेकर ज्यादा निश्चित होते हैं बनिस्बत उस स्थिति के जबकि उन दलीलों में से किसी एक दलील ने ही हमें उक्त निर्णय तक पहुंचाया हो और शेष अन्य किन्हीं अन्य निष्कर्षों तक ले गए हों।

जो भी हो, राजनीतिक चिंतन के इतिहास को देखा जाए तो ''प्राकृतिक नियम'' की दलीलें या ''उपयोग'' की दृष्टि से उपजे तर्क आमतौर पर परस्पर विरोधी नहीं माने जाते क्योंकि प्रकृति को व्यक्ति अप्रत्यक्ष तौर पर अनुभव से ही जान लेता है चाहे वह भौतिक विज्ञान में हों या नीतिशास्त्र में, और किसी अच्छे संस्थान की पहचान उसके अच्छे परिणाम या उपयोगिता से होती है। मानव अधिकारों के संदर्भ में उदारवादी दृष्टिकोण की जो विशिष्टता उसे दूसरों से अलग करती है, वह यह है कि आधारभूत अधिकारों को 'अहार्य' ठहराया गया है यानी मौलिक अधिकार कोई उपहार या सत्ता की अधीनस्थता – राजा हो संसद हो, कॉमिसार हो या कांग्रेसी- से मुक्ति मात्र नहीं है; बल्कि इनके पीछे एक नैतिक अभिप्रेरण क्रियाशील होता है और खास राजनीतिक व्यवस्थाओं से ये स्वतंत्र होते हैं। इस प्रकार अहार्य अधिकार

'लिखित आदेश' पर निर्भर नहीं; न ही ये किसी प्रामाणिक व्यक्ति द्वारा सौंपे जाते हैं, जैसे डॉक्टर दवाई के नुस्खे थमाते हैं, और न ही अन्यायपूर्वक मनमाने ढंग से छीन लिए जाते हैं।

रिचर्ड टक की ''नैचुरल राइटस थ्योरीज: देयर ऑरिजिन एंड डेवलपमेन्ट'' (कैंम्ब्रिज: कैंम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1979) में प्राकृतिक अधिकार सिद्धांतों के उद्गमों का बेहद उपयोगी ऐतिहासिक विवरण मौजूद है। (टक की जानकारी और उनकी विद्वता वाकई अद्भुत है, फिर भी कार्नेल यूनिवर्सिटी के इतिहासविद् ब्रायन टायरने ने अपने लेख, ''टक ऑन राइटस: सम मिमिएवल प्रॉब्लम्स'' जो ''हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकल थॉट'' खंड IV नं. 3 विन्टर 1983 में मौजूद है, में उनकी किताब के लिए एक उपयोगी पूरक दिया है। टक ने एंथनी पैग्डेन द्वारा संपादित ''दि लैंग्वेजेज ऑफ पॉलिटिकल थ्योरी इन अर्ली-मार्डन यूरोप'' (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987) में संकलित अपने लेख ''दि 'मार्डन' थ्योरी ऑफ नैचुरल लॉ'' में खुद ही अपनी बात को और विस्तारित ब्योरे में प्रस्तुत किया है। इसी तरह ''नेचर, जस्टिस, एंड राइट्स इन अरिस्टोट्ल्स पॉलिटिक्स'' (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995) पुस्तक में एक अन्य विवरण मिलता है जिसे सुप्रसिद्ध दार्शनिक फ्रेड डी. मिलर जूनियर ने लिखा है। इसमें कहा गया है कि आधुनिक अधिकार के सिद्धांत की जड़ें अरिस्टोट्ल की लेखनी में दिखाई देती हैं; '' लॉक का 'प्रकृति न्याय के सिद्धांत अरिस्टोट्ल के प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत से उपजा है'' और अरिस्टोट्ल के लेखों में ''प्रकृति आधारित अधिकारों'' का सिद्धांत प्रस्तुत होता है।

उदारवाद के इतिहास में सबसे अहम योगदान स्पेन के 'स्कूल ऑफ सैलेमान्का' का है जिसके सदस्यों ने वैयक्तिक अधिकारों और नैसर्गिक व्यवस्था के आधुनिक उदारवादी समन्वय के आधार के बारे में खुल कर अपना मत व्यक्त किया है। अर्जेंटीना के अर्थशास्त्री एलेजान्द्रो शॉफेन ने अपनी पुस्तक '' क्रिश्चियन्स फॉर फ्रीडम: लेट-स्कालेस्टिक इकोनोमिक्स (सेन फ्रैन्सिसको: इग्नेटिअस प्रेस, 1986) में इस स्कूल के बारे में अच्छा आकलन पेश किया है।

शॉफेन ने अपना ध्यान मुख्यत: स्वनियन्त्रित मुक्त बाजार को बारीकी से जनाने पर केंद्रित किया था, जिस पर स्पेन के शिक्षाविदों ने सफलता हासिल कर ली थी, परंतु सामाजिक विज्ञान में उनकी अग्रता सूक्ष्म रूप से नैतिक तथा विधिक दर्शन में विद्यमान व्यक्ति के सार्वभौमिक एवं अहार्य अधिकारों के चिंतन के विकास से संबद्ध थी। (बाजार और कुछ नहीं बल्कि है वह स्थिति है जो लोगों द्वारा सुरक्षित अधिकार प्राप्त करने, जिसमें विनिमय का अधिकार भी शामिल है, से उभरती है) वैयक्तिक अधिकारों

से संबद्ध मसले पर थोड़ी दिलचस्पी स्पेन द्वारा जीते गए क्षेत्रों में इंडियनों के साथ हो रहे व्यवहार के कारण भी जागी थी, जिसने स्वदेशी समुदाय के अधिकारों के सम्बन्ध में गंभीर प्रश्न खड़े किए थे।

अहार्य वैयक्तिक अधिकारों के आधुनिक उदारवादी चिंतन में फ्रांसिस्को डी विक्टोरिया द्वारा इंडियनों के अधिकार की रक्षा से संबंद्ध विचारों ने बहुत बड़ा योगदान किया है। उनकी रचना “ऑन दि अमेरिकन इंडियन्स” (जो एंथनी पैण्डेन और जेरेमी लॉरेंस द्वारा सहसंपादित फ्रांसिस्को डी विक्टोरिया की “पॉलिटिकल राइटिंग्स” (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991) में संकलित है, ने बाद के सिद्धांतकारों पर गहरा प्रभाव डाला था। विक्टोरिया ने अंत में यह लिखा है कि अरिस्टोट्ल ने जो दर्शन दिया, उस हिसाब से इंडियन 'प्राकृतिक दास' नहीं थे और बर्बर शक्तियों को निश्चित तौर पर सार्वजनिक और निजी, दोनों ही प्रकार से आधिपत्य प्राप्त था जैसा किसी भी ईसाई को था। तात्पर्य यह है कि उनसे उनकी संपत्ति नहीं छीनी जा सकती थी.... इस आधार पर कि वे वास्तविक मालिक (ueri domini) नहीं थे।

विक्टोरिया की लेखनी में तेरहवीं सदी के महान विधि-धर्मगुरु इन्नोसेंट IV के दर्शन की झलक मिलती है जिन्होंने इस बात पर जोर दिया था कि नास्तिकों ('काफिरों', जिसमें मुस्लिम तथा ईसाई भी शामिल हैं) को जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति से वंचित रखना अनुचित है| विधर्मियों को स्वामित्व, अधिकार और क्षेत्राधिकार प्राप्त होना अवैध या पाप नहीं, क्योंकि ये चीजें न सिर्फ आस्तिकों के लिए बनी हैं, बल्कि हर विवेकवान जीव के लिए हैं, जैसा कि कहा गया है। (इन्नोसेंट की दलीलें ब्रायन टायरनी द्वारा संपादित उत्कृष्ट संकलन “दि क्राइसिस ऑफ चर्च एंड स्टेट, 1050-1300” (टोरन्टो: यूनिवर्सिटी ऑफ टोरन्टो प्रेस, 1988) में मौजूद हैं, इसके अतिरिक्त उदारवाद के विकास से संबंधित कई दस्तावेज भी इसमें मिल सकते हैं)।

इंडियनों के अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्षरत विचारक हैं बार्लोम डी लैस कैसास, जिन्होंने जुआन गिन डी सेपल्वेदा के साथ 1550 में हुई सुप्रसिद्ध बहस में उनके पक्ष की वकालत की (लैस कैसास की दलीलों को बाद में एक किताब की शक्ल में प्रकाशित किया गया – 'इन डिफेंस ऑफ दि इंडियन्स' (सी. 1552; डीकाल्ब: नार्दन इलिनॉयस यूनिवर्सिटी प्रेस,1992) इसके अतिरिक्त उन्होंने यूरोपीय पाठकों को सचेत करने के लिए स्वदेशी लोगों के ऊपर विजयी राज्यों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों का दृश्य भी पेश किया था (देखें उनकी किताब 'दि डिवास्टेशन ऑफ दि इंडीज: ए ब्रीफ अकाउन्ट, (1552: बाल्टिमोर: दि जॉन हापकिन्स यूनिवर्सिटी प्रेस, 1992)।

स्कूल ऑफ सैलेमान्का के पूर्व उदारवादियों ने हर मनुष्य के जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति के अधिकारों के सशक्त बचाव को स्थापित करने में सफलता हासिल की थी, जो सच में हमारी सभ्यता की सबसे बड़ी उपलब्धि है। बेशक व्यवहार में आने से पहले वर्षों तक इसका उल्लंघन ही जायज माना जाता रहा, अन्ततः अहार्य वैयक्तिक अधिकार का सिद्धांत स्थापित हो चुका था और इस सिद्धांत ने बाद के दौर में दासों के उद्धार, पुरुष और स्त्रियों के बीच अधिकारों की समानता जैसे बिन्दुओं को प्रोत्साहित किया और कुछ हद तक असहायों, जो गुलाम न बन पाते तो मार डाले जाते, के साथ किए जा रहे व्यवहार पर अंकुश भी लगा रखा था।

इस परंपरा और इन बहसों से जो बात उभरी, वह यह थी कि एक नैतिक प्रतिनिधि होने का अर्थ है, व्यक्ति को अपने कार्यों की जिम्मेवारी लेनी होगी। इसे 'पूर्ण स्वामित्व' या आत्म-निर्णय कहते हैं जिसका अर्थ यह है कि व्यक्ति को अनिवार्य रूप से 'अंतर्निहित संभाव्यता' के आधारों पर अपने दायित्वों को पूरा करने का 'अधिकार' है। ये विचार अंग्रेजी में इस वाक्य 'ए प्रॉपर्टी इन वन्स पर्सन' में व्यक्त हुए हैं, जिसे अंग्रेज लेवेलर रिचर्ड ओवरटोन (इस संग्रह में संकलित भागों को देखें) और प्रख्यात अंग्रेज चिकित्सक, दार्शनिक और उदारवाद के सक्रिय कार्यकर्ता जॉन लॉक (इस संग्रह में मौजूद रचनाओं को देखें) जैसी विभूतियों ने वृहत आकार दिया। लॉक ने संपत्ति, सहमति, अनुबंध तथा वैध सरकार के जन्म और सीमाओं के विचारों को एक खूबसूरत समन्वय में पेश किया है। आधुनिक उदारवाद पर पड़े लॉक के प्रबुद्ध विचारों के प्रभाव और आधुनिक विश्व को दिए गए उनके योगदानों को हम माप नहीं सकते हैं। खासतौर पर अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा में यह ज्यादा प्रकट रूप में दिखता है जिसमें पूरे विश्व के लोगों को उदारवादी आदर्शों के बारे में बताया गया है। जिस पुस्तक में लॉक ने इन महत्वपूर्ण आदर्शों को एक साथ पिरोया है उसका नाम है "टू ट्रिटीज ऑफ गवर्नमेंट"। इनमें से पहला मुख्यतः सर राबर्ट फिल्मर के निरपेक्षवाद की दलीलों का खंडन है, जबकि दूसरे में ज्यादातर लॉक की अपनी ही दलीलें हैं जो उन्होंने सीमित सरकार और वैयक्तिक स्वातंत्र्य की तरफ से रखी हैं। इसकी भाषा बहुत ही सहज है, परंतु अच्छा होगा कि इसके लिए सटिप्पण संस्करण लिया जाए ताकि समकालीन पाठकों को किताब में उद्धृत सन्दर्भों को समझने में मुश्किल न हो। (लॉक के तर्कों को ए. जॉन सायमन्स ने "दि लॉकियन थ्योरी ऑफ राइट्स" (प्रिन्स्टनः प्रिन्स्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1992) में पुनः अभिव्यक्त किया है, आलोचना से बचाया है, तथा नए मसलों और समस्याओं के लिए इसे प्रयुक्त किया है- हालांकि यह उदारवादी दृष्टिकोणों के साथ कई मायनों में पूरी तरह संगत नहीं दिखता।

समाजवादी इतिहासकारों (जैसे सी.बी. मैकफर्सन, जिनकी ''दि पालिटिकल थ्योरी ऑफ पजेसिव इंडिविजुअलिज्म- ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1962- ने महाविद्यालय के हजारों विद्यालयों को गलत दिशा में भटकाया था) द्वारा इन घटनाक्रमों के लिए दी गई व्याख्या के विपरीत संपत्ति की अवधारणा किसी सद्यजात बुर्जुआ की अमीरी का औचित्य सिद्ध करने की कोई कायरतापूर्ण युक्ति नहीं थी बल्कि, ऐसे समूहों जैसे पराजित अमेरिकी इंडियन और उत्पीड़ित धार्मिक भिन्न मतधारियों के बचाव में कही गई पहली एवं सर्वप्रमुख अभिव्यक्ति थी। (किसी व्यक्ति के स्वामित्व में संपत्ति की अवधारणा की ''पूंजीवादी असमानता'' को औचित्यपूर्ण ठहराने की एक युक्ति के रूप में की गई बेतुकी व्याख्या को ऐतिहासिक त्रुटियों के परिणाम के आधार पर अट्राक्टा इन्ग्राम ने उदारवाद के विरुद्ध अपने लेख में पुन: अभिव्यपक्त किया है, "ए पॉलिटिकल थ्योरी ऑफ राइट्स- ऑक्सफोर्ड" (दि क्लेयरेन्डन प्रेस ऑफ ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994)। ऐतिहासिक अभिलेख से अनजान होने के कारण इन्ग्राम ने इतिहास की अपनी गलत व्याख्या को 'आभासी विश्वसनीयता' का नाम दिया और अंतत: इसे ही व्यक्ति के स्वामित्व के विरुद्ध खड़ी दलील के रूप में देखा है।) व्यक्ति के स्वामित्व (वे कभी-कभी इसे "अपनी-मिल्कियत" शब्द से भी इंगित करते हैं) और अंत:करण की स्वतंत्रता के बीच के संबंध को विचारक/इतिहासविद् जार्ज एच. स्मिथ ने अपने ऐतिहासिक सर्वेक्षण "फिलासफीज़ ऑफ टॉलरेशन" (जार्ज एच स्मिथ की "एथेइज्म, आएन रैन्ड, और अदर हेयरसीज" में (बफेलो, न्यूयार्क: प्रामिथियस बुक्स, 1991)) में बड़ी सुंदरता से प्रस्तुत किया है।

वियोज्य वस्तुओं (समकालीन लेखकों द्वारा 'संपत्ति' के लिए इस्तेमाल किया गया सबसे आम शब्द) के साथ संपत्ति की अवधारणा के प्रयोग के इतिहास का अध्ययन कर दार्शनिक स्टीफन बकल ने अपनी किताब "नैचुरल लॉ एंड दि थ्योरी ऑफ प्रापर्टी: ग्राटिअस टू ह्यूम" (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991) में बड़ी सुंदर प्रस्तुति दी है। मॅरे एन. रॉथबार्ड ने अपनी किताब 'दि एथिक्स ऑफ लिबर्टी' (एटलांटिक हाईलैंड्स, न्यू जर्सी: ह्यूमैनिटीज प्रेस, 1982) में इस सिद्धांत को और विकसित किया है जिसमें भिन्न प्रकार की महत्वपूर्ण समस्याओं के साथ इसे प्रयुक्त किया गया है।

उपरोक्त अल्लिखित बातों में प्रचारित वैयक्तिक अधिकारों के उत्कृष्ट ब्योरे व्यक्ति के कार्यों, या 'पूर्ण स्वामित्व' (इस विषय पर एफ. ए. हयाक ने "रेस्पांसिबिलिटी एंड फ्रीडम"- दि कांस्टिट्यूशन ऑफ लिबर्टी शिकागो: शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस, 1960- नामक अध्याय में पुन: अपने विचार प्रकट किए हैं) से संबंधित दायित्व के मुद्दे पर केंद्रित नजर आते हैं।

यह सिद्धांत आएन रैंड और उनसे प्रेरित दार्शनिकों द्वारा समसायिक काल में कुछ हद तक ज्यादा विश्लेषणात्मक तरीके से पुनः व्यक्त हुआ है (धारणाओं या तत्वों के विश्लेषण पर केंद्रित करते हुए)। रैंड के तर्क जो टुकड़ों में नजर आते हैं (उनके विभिन्न लेखों में बिखरे हुए होने के कारण) दार्शनिक इरिक मार्क द्वारा अपने लेख “दि फंडामेन्टल मॉरल एलिमेन्ट्स इन रैंड्स थ्योरी ऑफ राइट्स” जो डगलस जे. डेन उईल तथा डगलस बी. रासम्युसेन द्वारा संपादित ‘दि फिलॉसफिक थॉट ऑफ आएन रैंड’ (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनॉयस प्रेस, 1986) में संकलित है, में पुनः अभिव्यक्त किए गए हैं। इस बात पर कि अधिकार किसी जीवित विवेकशील जीव के अस्तित्व की आवश्यकता है, जो रैंड के दर्शन का केंद्रीय भाव है, आगे टाइबर आर. मर्चेंट की किताब “इंडिविजुअल्स एंड देयर राइट्स” (ला सॉल, 111: ओपेन कोर्ट, 1989) और डगलस रासम्युसेन तथा डगलस डी. उईल की 'लिबर्टी एंड नेचरः ऐन अरिस्टोटेलियन डिफेंस ऑफ लिबरल आर्डर' (ला सॉल, 111.: ओपेन कोर्ट, 1991) में और गहराई से मंथन किया गया है। ये दोनों ही पुस्तकें “नैतिक यथार्थवाद” के अन्य रूपों का बचाव करती दिखाई देती हैं। अरिस्टोटल के “निकोमाशियन एथिक्स” से संकेत लेकर रासम्युसेन और डेन उईल मनुष्य के उत्थान के लिए “आत्म-मार्गदर्शन” की अहमियत पर जोर डालते हैं। यह एक ऐसा विषय है जो उदारवादी विचारक लॉरेन ई. लोमास्की द्वारा प्रस्तावित दार्शनिक रूप से थोड़े भिन्न ब्योरे में भी अपनी भूमिका निभाता है। “पर्सन्स, राइट्स, एंड दि मॉरल कम्युनिटी” (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिविर्सिटी प्रेस, 1987) में लोमास्की ने यह दलील रखी है कि मनुष्य चयन का अधिकार और अपने जीवन की योजनाओं के लिए सतत लगनशील रहने के कारण “योजना अन्वेषी” कहलाता है।

इम्मानुएल कांत के नए “इंद्रियातीत” तर्क-स्वरूप में इसी तरह अधिकारों के प्रति एक प्रखर दृष्टिकोण नजर आता है। उन्होंने (विषय-सामग्रियों को थोड़ा सरल बनाने के लिए) अंकगणित, यूक्लिडियन ज्यामिती और न्यूटन की भौतिकी के स्वीकृत सत्यों से शुरुआत की और फिर यह सवाल उठाया है कि ज्ञान के विस्तार के लिए इन विज्ञानों में कौन सा विज्ञान सटीक होगा। इसी प्रकार उदारवादी जीव-नीतिशास्त्री एच. ट्रिस्ट्रैम इंगेलहार्ड जूनियर ने पूछा है कि बहुलवादी विस्तारित क्रम या नागरिक समाज के बने रहने के लिए कौन-सा तर्क सत्य होगा; उन्होंने नैतिकता की दो ‘परतों’ वाले सिद्धांत को सामने रखा, जो सामाजिक सहअस्तित्व और सहयोग का बस ढांचा तैयार करते हैं और विशिष्ट रिवाजों, आदेशों तथा खास धार्मिक या दार्शनिक या सांप्रदायिक नैतिकताओं की आवश्यकताओं की ओर इशारा किया, जो नैतिक जीवन की विषय वस्तु का प्रावधान करता है।

इस सिद्धांत को अपने सामान्य स्वरूप में निर्धारित किया गया और उसके बाद इसे इंगेलहार्ड ने अपनी किताब 'दि फाउंडेशन आफ बायोएथिक्स' (आक्सफोर्ड: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1986) में जीव चिकित्सीय आचारों के मसलों और ठोस समस्याओं के लिए प्रयुक्त किया (दिलचस्प है कि यह इंद्रियातीत दलील सैमुअल इसके लिए पफेनडार्फ जैसे विचारकों द्वारा विकसित 'काल्पनिक अनिवार्यता' से काफी नजदीकी दर्शाती है, जिन्होंने 'सामाजिकता' को न्याय के नियमों के आधार के रूप में सशक्त किया है: यदि तुम अन्य मनुष्यों के साथ शांति और सामंजस्य के साथ रहना चाहते हो तो कुछ चीजें जरूरी हैं जैसे अधिकार, उचित व्यवहार के नियम और संपत्ति। पफेनडार्फ की आन दि ड्यूटी आफ मैन एंड सिटीजन- 1673; कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1991 और क्रैग एल. कार संपादित दि पालिटिकल राइटिंग्स आफ सैमुअल पफेनडार्फ- आक्सफोर्ड: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994- को देखें।)

मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी के दार्शनिक हिलेल स्टेनर द्वारा प्रस्तुत विवरण के शुरू में अधिकारों की प्रकृति के बारे में बताया गया है और आगे इसी से न्याय की एकरूप प्रणाली प्राप्त होती दिखाई देती है। उन्होंने उचित अधिकारों की आवश्यक विशिष्टता के रूप में 'सहसंभावना' के विषय पर जोर डाला है। सहसंभव अधिकारों के समूह में वैसे ही अधिकारों को शामिल किया गया है जिनके मतभेद पैदा किए बिना एक ही समय में पालन किए जा सके। किसी व्यक्ति की अपनी मिल्कियत की वजह से प्राप्त अधिकारों से उस आवश्यकता की पूर्ति होती है जबकि विभिन्न तथाकथित 'कल्याण अधिकारों,' 'राष्ट्रीय अधिकारों' इत्यादि के साथ ऐसा नहीं है। स्टेनर की मुख्य कृति है 'ऐन एस्से ऑन राइट' (ऑक्सफोर्ड: ब्लैकवेल, 1994) जो विश्लेषणात्मक निग्रह की अद्भुत प्रस्तुति है जो कभी-कभी अनपेक्षित परिणामों की ओर ले जाती है। इनमें कुछ तथ्य ऐसे भी हैं जिनसे उदारवादी आम तौर पर सहमत नहीं हैं। (गौरतलब है कि स्टेनर प्राकृतिक संसाधनों और भूमि पर 'जार्जवादी ' - 19 वीं सदी के अर्थशास्त्री हेनरी जार्ज के नाम से प्रचलित विचारधारा - स्थिति का समर्थन करते हैं जिसके अनुसार प्राकृतिक रूप से विद्यमान संसाधनों पर सभी का समान हक है जो लाकवादी स्थिति से भिन्न है जहां सभी को उपयुक्त पाने का समान हक है। पाठक आसानी से अंदाजा लगा सकते हैं कि शब्दों में प्रकट हल्का सा अंतर भी आश्चर्यजनक रूप से भिन्न निष्कर्ष दिखा सकता है। व्यक्ति के स्वामित्व के अंतर्गत संपत्ति (या 'स्व-मिल्कियत') के पक्ष में मजबूती से अपनी बात रखने वाले एक समकालीन दार्शनिक एरिक मैक भी हैं जिनके लेखों में इस विषय से संबद्ध बचाव पक्ष को प्रस्तुत किया गया है जिसमें शामिल है 'एजेंट-रेलेटिविटी ऑफ वैल्यू, डियांटिक रेस्ट्रेंट्स, और सेल्फ-ओनरशिप' जो आर.जी. फ्रे और क्रिस्टोफर डब्लू मौरिस द्वारा संपादित 'वैल्यू, वेल्फेयर एंड मोरैलिटी' (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1993)

में संकलित है और 'पर्सनल इंटेग्रिटी, प्रैक्टिकल रिकागनिशन एंड राइट्स' जो 'दि मानिस्ट' खंड-76 क्रम-1 (जनवरी 1993) में मौजूद है। मैक ने अपने लेख' राइट्स टू नैचुरल टैलेंट्स एंड प्योर प्राफिट्स: ए क्रिटिक आफ गोतिए आन राइट्स एंड इकोनामिक रेंट' जो रॉबिन कावेन और मारियो जे रिजो द्वारा संपादित 'प्रॉफिट्स एंड मोरैलिटी' (शिकागो: यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रेस 1995) में व्यक्ति के स्वामित्व के अंतर्गत संपत्ति के सिद्धांत को एक खास मुद्दे के साथ प्रयुक्त किया है जिसके तहत यह कहने की कोशिश की गई है कि स्वैच्छिक विनिमय से मिला लाभ उचित है या नहीं। (कोवेन और रिज़ो द्वारा संपादित संस्करण में अर्थशास्त्री इजरायल किज्नर और जैन नार्वेशन की दिलचस्प बहस शामिल है। जहां किज्नर उपयुक्तता के ' पाने वाला - रखने वाला ' नियम का बचाव करते हैं और लाभ की अर्थशास्त्रीय अवधारणा का चित्रण करते हैं, वहीं जैन नार्वेशन बाजार विनिमय और उचित रूप से कमाए गए लाभों की विभिन्न आलोचनाओं से रक्षा करते हैं।

कुछ अन्य आलेखों ने भी अधिकारों की आम उपयोगिता पर बल डाला है। इनमें वे आलेख प्रमुख हैं जिन्होंने लाभप्रद सामाजिक सहयोग के विकास में अधिकारों की केंद्रीय भूमिका पर जोर दिया है। इसका एक बहुत ही दिलचस्प उदाहरण ब्रिटिश अर्थशास्त्री राबर्ट शुगडेन के लेख 'लेबर प्रॉपर्टी ऐंड द मोरैलिटी ऑफ द मार्केट्स' जो बी.एल. एंडर्सन और ए. जे. एच. लैथाम द्वारा संपादित 'द मार्केट इन हिस्ट्री' (लंदन: क्रूम हेल्म 1986) में मिलता है। ऐसा ही नजरिया अर्थशास्त्री और विधि व्याख्याता डेविड फ्रायडमैन की 'ए पॉजिटिव अकाउंट ऑफ प्रापर्टी राइट्स' जो एलेन फ्रैंकेल पॉल, फ्रेड द मिलर जूनियर और जेफ्री पॉल द्वारा संपादित 'प्रॉपर्टी राइट्स' (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1994) में संकलित है, में दिखाई देता है। शुगडेन और फ्रायडमैन, दोनों ने ही तुम और तुम्हारे शरीर: सारे संसाधनों में 'सबसे कम मात्रा में उपलब्ध' पर स्वामित्व प्राप्त करने की समस्या के समाधान के लिए 'स्व-मिल्कियत' की अवधारणा को एक विशिष्ट या प्रमुख समाधान के रूप में विकसित करने की कोशिश की है.

कभी-कभी यह मुद्दा भी उभरा है कि समूहों के भी अपने अधिकार हो सकते हैं (बल्कि यह जताया गया है कि समूह ही मुख्यतः अधिकारधारक हैं और व्यक्ति वह इकाई है जिसे समूह के निर्णयानुसार अधिकार प्रदान किए जाते हैं, तात्पर्य यह है कि वे फिर वापस ले लिए जाएंगे।) इस मसले ने 'सकारात्मक क्रिया', आदिवासियों के अधिकार और अन्य महत्वपूर्ण विषयों जैसे बिंदुओं पर चल रही वर्तमान बहसों में पुनः केंद्रीय जगह ले ली है। राजनीतिशास्त्री चंद्रन कुकाखास ने अपने लेख 'आर देयर एनी कल्चरल राइट्स?' पॉलिटिकल थ्योरी, खंड-20, संख्या-1 (फरवरी-1992) में इस विषय पर सूक्ष्म चिंतन पेश किया

है। सामाजिक, लोकतांत्रिक विचारक विल किमलिका ने पालिटिकल थ्योरी के इसी संस्करण में कुकाखास की आलोचना की है जिसका जवाब कूकाखास ने खंड-20, संख्या-4 (नवंबर 1992) में दिया है।

इन स्थापित अहार्य अधिकारों का विस्तार बहुत हद तक सभ्यता का पैमाना है। स्वतंत्रता के इतिहास के अध्ययन का एक तरीका यह भी है कि इसे निरंतर विस्तृत होते समूहों के बीच अधिकारों की स्थापना के इतिहास के रूप में देखा जाए। स्त्रियों के अधिकारों के संघर्ष को इस संकलन में, मुख्य तौर पर मैरी वाल्सटोनक्राफ्ट और ग्रिम्की बहनों की रचनाओं में खास जगह मिली है। पर इस महत्वपूर्ण विषय पर अतिरिक्त सामग्री वेंडी मैकेलराय द्वारा संपादित 'फ्रीडम फैमिनिन ऐंड द स्टेट' (न्यूयार्कः होम्स एंड मायर) में मौजूद है। रोज लाब कोसर ने 'इन डिफेंस ऑफ मार्डनिटीः रोल काम्प्लेक्सिटी ऐंड इंडिविजुअल ऑटोनोमी' (स्टैनफोर्डः स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1991) पूस्तक में आधुनिक उदार समाज के बचाव में दलील पेश की है जो 'सम्मिश्र भूमिका' की संभावना पर केंद्रित है और थोपी हुई भूमिकाओं से स्त्रियों की आजादी पर जोर डालती है। इसी तरह व्यक्तिवादी स्त्रीवाद की एक आधुनिक पुनःअभिव्यक्ति जॉन कैनेडी टेलर कृत 'रीक्लेमिंग दि मेन स्ट्रीमः इंडिविजुअलिस्ट फेमेनिज्म रीडिस्कवर्ड' (बफैलो, न्यूयार्कः प्रमेथियस बुक्स 1992) पुस्तक में नजर आती है।

अधिकारों की बात पर हो रही इस बहस का अंत राबर्ट नॉजिक की महत्वपूर्ण कृति 'एनार्की, स्टेट, ऐंड यूटोपिया', जिसका जिक्र पहले खंड में हुआ है, को पुनः इंगित किए बगैर नहीं हो सकता। इस दिलचस्प और विचारोत्तेजक किताब के बारे में बहुत सी बातें कही जा सकती हैं पर इस परिप्रेक्ष्य में नॉजिक का वैयक्तिक अधिकारों का स्वीकृत व्यवहार पर 'अतिरिक्त बाध्यताओं' के रूप में निरूपण करना खास उल्लेखनीय है। नॉजिक के अनुसार वह दृष्टिकोण, जिसके तहत नैतिक रूप से हमें जो कार्य करने की जिम्मेदारी दी जाती है, उसका ध्येय अधिकारों के उल्लंघन के परिमाण को कम करना है भले ही इस प्रक्रिया में हम अपने अधिकारों का हनन ही क्यों न कर डालें, 'अधिकारों का उपयोगितावाद' कहलाता है। वे इसी के विरुद्ध दलील पेश करते हैं। वे कहते हैं कि दूसरों के अधिकार हमारे व्यवहार पर अंकुश रखते हैं। अधिकार महत्वपूर्ण संकेत स्तंभ हैं क्योंकि वे इस हेतु हमारा मार्गदर्शन करते हैं कि हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए। अधिकार हमारे कर्म को दिशा देते हैं और वह व्यवस्था जिसमें ईश्वर के साक्षी (जैसे किसी सर्वशक्तिमान निकाय की सहायता से कई 'सकारात्मक' कल्याणकारी अधिकारों द्वारा विभिन्न विरोधी अधिकारों का परस्पर- और अन्य हितों के साथ- संतुलन बनाए रखना) होने की जरूरत पड़े, वह शायद ही अधिकारों की प्रणाली के रूप में औचित्यपूर्ण लगती है।

सहज व्यवस्था

राजनीतिक सिद्धांत के रूप में उदारवाद को दो परस्पर सशक्त बनाते सिद्धांतों के समन्वय के रूप में सबसे बेहतर समझा जा सकता है, पहला, 'आदर्श' (जिसमें 'चाहिए' वक्तव्य शामिल है।) और दूसरा, 'सकारात्मक' (इसमें 'है' वक्तव्य शामिल है)। आदर्श सिद्धांत वैयक्तिक अधिकारों का सिद्धांत है; सकारात्मक सिद्धांत व्यवस्था को लागू करने का सिद्धांत है। ये दोनों विषय किस तरह से परस्पर संबंधित हैं, इसे निम्नलिखित तरीके से समझा जा सकता हैः यदि वैयक्तिक अधिकारों के प्रति दिखाया गया सम्मान व्यवस्था या समृद्धि के लिए न होकर शक्ति प्रदर्शन, कुव्यवस्था, सभ्यता की अवनति और अकाल जैसी स्थितियों के लिए हो तो शायद ही कोई ऐसे तथाकथित अधिकारों को धारण करना चाहेगा और यदि किसी ने धारण किया भी तो वह मानव जाति का शत्रु है। जो लोग व्यवस्था को सिर्फ उसी स्थिति में देख सकते हैं जब कोई क्रमबद्ध चेतन विचार विद्यमान हो- समाजवादी, सर्वाधिकारवादी, राजतंत्रवादी, निरपेक्षवादी इत्यादि- उन्हें वैयक्तिक अधिकारों की वजह से जन्मे ऐसे परिणामों से भय लगता है। परंतु अगर यह दर्शाया जाए कि लोगों का समूह 'सहसंभाव्य' अधिकारों (जैसा कि ऊपर अहार्य अधिकारों के अध्याय में वर्णन हुआ है।) का पालन करते हुए कुव्यवस्था नहीं बल्कि व्यवस्था, सहयोग और मनुष्य के कल्याण के संदर्भ में उत्तरोत्तर प्रगति की स्थिति पैदा करता है तो व्यक्ति की स्वायत्तता और गरिमा के प्रति सम्मान को न सिर्फ सहस्थिति के रूप में देखा जाएगा बल्कि सामाजिक समन्विता, समृद्धि और विकसित सभ्यता की उपलब्धि के लिए आवश्यक अनुकूल अवस्थाओं के रूप में भी माना जाएगा। दरअसल, वैयक्तिक अधिकार और सहज व्यवस्था उदारवाद के सर्वोच्च पूरक तत्व हैं।

वह अध्ययन जिसके अंर्तगत हम इस बात की विवेचना करते हैं कि कई व्यक्तियों द्वारा किए गए कार्यों के अनभिप्रेत परिणामों से व्यवस्था का जन्म होता है, 'सहज व्यवस्था' का अध्ययन कहलाता है और यह शाखा उदारवादी समन्वय के सबसे महत्वपूर्ण तत्वों में एक है। थॉमस पेने ने व्यवस्था एवं अधिकारों के मिश्रण के वृहत् अधिकारों को बखूबी पहचाना था। उन्होंने 'दि राइट्स ऑफ मैन' पार्ट-1 (1791) में प्राकृतिक एवं अहार्य अधिकारों के पक्ष में इस प्रकार कहा हैः "प्राकृतिक अधिकार वे हैं जो मनुष्य के अपने अस्तित्व के अधिकार से संबद्ध होते हैं।" इसे 'दि राइट्स ऑफ मैन पार्ट-2 (1792) में बहुत बारीक विवेचना के साथ जोड़ा गया हैः 'अमेरिकी युद्ध के शुरू होने के दो साल से भी ज्यादा समय तक तथा अन्य अमेरिकी राज्यों में और लंबी अवधि तक वहां सत्ता की कोई स्थापित संरचना नहीं थी। पुरानी शासन व्यवस्था खत्म हो चुकी थी और देश नई शासन प्रणाली को स्थापित करने की दिशा में दिए जा रहे ध्यान को तर्कसंगत ठहराने में कुछ ज्यादा ही लीन था; फिर भी इस अंतराल

के दौरान यूरोप के अन्य देशों की ही तरह व्यवस्था और सामंजस्य को यहां अनुल्लंघनीय स्वरूप में स्थिर रखा गया।' (यह अंश इस संकलन में उद्धृत है।) शाही शक्ति के समर्थकों ने यह जतलाया था कि यदि शाही शक्ति के एक कण को भी चुनौती दी गई तो उथल-पुथल, कुव्यवस्था, अशांति और नरसंहार की स्थिति पैदा हो जाएगी। फिर भी वहां राज्य सत्ता क्षीण ही नहीं थी बल्कि पूर्णरूपेण अनुपस्थित थी और लोग खेती, निर्माण, व्यापार जैसे क्रियाकलापों में लगे थे और एक-दूसरे को परस्पर सम्मान देते हुए 'व्यवस्था एवं सामंजस्य' के साथ जीवन व्यतीत कर रहे थे। सवाल यह उठता है कि यह कैसे संभव हुआ होगा और यही उदारवादी विचारकों और समाजशास्त्रियों के लिए शोध का महत्वपूर्ण विषय है। वास्तव में पेने पहले व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने सामाजिक व्यवस्था और वैयक्तिक अधिकारों के बीच संबंध की ओर इशारा किया था, (स्पेन के विद्वान इस बिंदु पर पहले ही गौर कर चुके थे परंतु उनकी विशिष्टता यह थी कि उनकी सशक्त लेखिनी और लुभावनी अभिव्यक्ति कला ने यह समझ लिया था कि अहार्य अधिकारों के नैतिक सिद्धांत और सहज व्यवस्था के सामाजिक सिद्धांत के सम्मिश्रण पर आधारित राजनीतिक सिद्धांत कितना आकर्षक है। सहज व्यवस्था के सिद्धांत के बौद्धिक सिद्धांत के बारे में प्रबुद्ध अर्थशास्त्री एफ.ए. हयात ने अपने लेख 'दि रिजल्ट्स ऑफ ह्यूमन ऐक्शन बट नॉट ऑफ ह्यूमन डिजाइन' में विस्तार से विचार किया है जो 'स्टडीज़ इन फिलॉसफी पॉलिटिक्स ऐंड इकोनॉमिक्स' (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस 1967) में संकलित है। इसमें प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की अवधि की विषय संबद्ध सामग्री एकत्रित है।

मुक्त बाजार की स्व-नियामक व्यवस्था के आकलन से राजनीतिक अर्थव्यवस्था की एक परंपरागत उदार या उदारवादी प्रणाली को गति मिल रही थी। जैसा कि अंग्रेज लेखक डेवनेंट ने अपने पर्चे 'ए मेमोरियल कन्सर्निंग दि कौयन ऑफ इंग्लैंड' में लिखा था, कीमतों पर नियंत्रण के लिए किया जा रहा प्रयास अप्रभावी था क्योंकि 'कोई भी कानून किसी को भी व्यापार के स्वाभाविक क्रम में अपनी जरूरतों की आपूर्ति में बाधा नहीं डाल सकता, हर उत्पाद को उसकी कीमत प्राप्त होगी...।' सर्वोच्च सत्ता बहुत कुछ कर सकती है पर वह प्रकृति के नियमों को नहीं बदल सकती। इनमें सबसे मौलिक वक्तव्य है' हर मनुष्य को अपना संरक्षण करना चाहिए।' जायस एप्पलबी ने इस परिच्छेद पर इस प्रकार टिप्पणी की है, 'आर्थिक लेखकों ने मुक्त बाजार के क्रियाकलापों में अंतर्निहित नियमितता को उजागर किया है। जहां एक ओर नैतिकतावादी लंबे समय से यह कहते आए थे वहीं कीमत को मांग से संबद्ध बताने वाले आर्थिक विश्लेषकों ने आवश्यकता को नियमनिष्ठ ठहराया था और इस तरह वे एक संभावना और एक वास्तविकता पर आ पहुंचे थे। सच्चाई यह थी कि अपनी संपत्ति और अपने बारे में निर्णय लेने

वाले व्यक्तियों से ही बाजार में कीमतों का निर्धारण होता था। ऐसी संभावना थी कि बाजार के भागीदारों का आर्थिक बुद्धिवाद अर्थव्यवस्था को क्रमबद्ध कर सकता था जो पहले सत्ताधारियों द्वारा तय होती थी।' (जायस एप्पलबी 'इकोनॉमिक थॉट ऐंड आइडियोलॉजी इन सेवेन्टीन्थ सेंचुरी इंग्लैंड'- (प्रिन्सटनः प्रिसन्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1978) पृ. सं.187-88.

सहज व्यवस्था की अवधारणा के विकास में अत्यंत मौलिक चिंतन के प्रणेता हैं स्काटलैंड के एडम फर्ग्युसन, जिन्हें हयाक ने अक्सर उद्धृत किया है। 1767 में लिखी अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक में फर्ग्युसन ने ध्यान दिलाया है कि "राष्ट्र स्थापित सत्ताओं पर डगमगा जाते हैं, जो वास्तव में मनुष्य के कार्य का परिणाम है, पर मनुष्य की योजना का क्रियान्वयन नहीं" (देखें- एडम फर्ग्युसन की 'एन एस्से एन द हिस्ट्री ऑफ सिविल सोसाइटी' (1767; कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995 देखें)। "स्काटलैंड प्रबोध" के विद्वान विचारकों के योगदानों की बहुत अच्छी समीक्षा रोनाल्ड हैमोवी की संक्षिप्त कृति "द स्कॉटिश एनलाइटेनमेन्ट ऐंड द थ्योरी आफ स्पान्टेनियस ऑर्डर" (कार्बनडेलः सदर्न इलिनायस यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987) में मिलती है।

सहज व्यवस्था का अध्ययन शायद ही किसी आर्थिक घटना तक सीमित होता है। माइकल पोलैनी, एक प्रख्यात रसायनशास्त्री, को जब बोध हुआ कि विज्ञान का क्रम 'योजनाबद्ध' नहीं था, और किया भी नहीं जा सकता था, तब उन्होंने समाजवाद को खारिज कर मुक्त-बाजार उदारवाद को अपना लिया था। जब समाजवादी बुद्धिजीवियों ने घोषणा की- जैसा कि समाजवादी प्रतिमानों के धराशायी होने के पहले वे ऐसा करने के आदी थे- कि "योजनाबद्ध विज्ञान" के अंतर्गत फलां-फलां चीज का आविष्कार 'अमुक' साल में होगा और अन्य तथ्य या मत या सिद्धांत की खोज अगले साल होगी और - यह सब समाज की विवेकपूर्ण योजना के अनुसार होगा, तब पोलैनी को यह अहसास हुआ कि इस तरह की योजना या सामाजिक अभियांत्रिकी बेतुकी है, क्योंकि वैज्ञानिक प्रगति की 'योजना' बनाई ही नहीं जा सकती। वैज्ञानिक प्रगति उस तरह से क्रियाशील नहीं होती, ऐसा पोलैनी अपने निजी अनुभव से समझ चुके थे। पोलैनी ने "दि लॉजिक ऑफ लिबर्टी" (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस 1951) के नाम से संकलित अपने लेखों में प्राकृतिक विज्ञानों के खास- पर अनन्य नहीं- हवाले से अपने प्रखर चिंतन में यह मंथन किया है कि किस तरह यह क्रम मनुष्य के कार्य के अनभिप्रेत परिणाम से उभर सकता है। एक और परंपरावादी उदार विचारक और विज्ञान-दार्शनिक हैं सर कार्ल पौपर, जिन्होंने बताया कि यह विचार कि कोई मनुष्य अपने भविष्य की जानकारी का पूर्वानुमान उसी प्रकार कर सकता है जिस पर समाजवादियों ने बल डाला था, वैचारिक रूप से असंगत थाः यदि कोई भविष्य की जानकारी का

अनुमान लगा सकता है तब सारी बातें उसे पहले से ही ज्ञात रहेंगी और ऐसी स्थिति में किसी आविष्कार का सवाल बस कल्पित ही रह जाएगा। (पौपर ने अपनी उत्कृष्ट पुस्तक 'दि पावर्टी ऑफ हिस्टोरीसिज्म'- बोस्टनः बीकन प्रेस 1957, में इस ऐतिहासिक पूर्वानुमान की आलोचना की है।) समूहवादी दर्शन पर उनकी समालोचना 'दि ओपन सोसाइटी ऐंड इट्स एनेमीज'' (प्रिन्सटनः प्रिसन्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1950) में छपी है जिसमें प्लेटो, हेगेल तथा मार्क्स की समीक्षा की गई है। स्वतंत्रता और मुक्त समाज पर उनके अन्य लेख 'कंजक्चर्स ऐंड रेफ्यूटेशन्सः द ग्रोथ ऑफ साइंटिफिक नॉलेज' (न्यूयार्कः हार्पर ऐंड रो, 1968) में मौजूद हैं। इनमें खास हैं 'पब्लिक ओपिनियन ऐंड लिबरल प्रिंसिपल्स 'और' यूटोपिया एंड वायलेंस''। पत्रकार जोनाथन राच ने 'काइंडली इनक्वीजीटर्सः दि न्यू अटैक्स ऑन दि थॉट' (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस 1993) पुस्तक में दर्शाया है कि विज्ञान के इतिहास के परीक्षण द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर तैयार दलीलों को 'रुढ़ीवादी' और 'राजनीतिक रूप से सही', दोनों ही प्रकार के प्रयासों के विरुद्ध नियुक्त किया गया है ताकि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाया जा सके।

इटली के एक विख्यात न्यायशास्त्री ने कानून को ही- उदारवाद के विरोधियों की नजर में जो नियंत्रण आधारित व्यवस्था का प्रतिमान है- सहज व्यवस्था की प्रणाली के रूप में केंद्रीय तत्व माना है। उनके कुछ अति महत्वपूर्ण अंग्रेजी के लेख एवं व्याख्यान 'फ्रीडम ऐंड दि लॉ' (तृतीय संस्करणः इंडियन पोलिसः लिबर्टी प्रेस 1991में एक साथ संकलित हैं।) (उनका सबसे उल्लेखनीय लेख है 'दि ला ऐज़ इंडिविजुअल क्लेम')। इसी तरह 'विधि और अर्थशास्त्र' के रूप में जानी जा रहीं ज्यादातर अध्ययन शाखाएं लियोनी और अन्य उदारवादी विद्वानों की कृतियों में दिखाई देती हैं। (उदाहरण के तौर पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त रोनाल्ड कोस, जिनकी लेखनी पर आगे चर्चा होगी।) इनमें मुख्यतः इस बात को समझने पर बल दिया गया है कि कैसे किसी के द्वारा 'योजनाबद्ध' किए बगैर बाजार को आकार देने वाली विधि संस्थाएं, जैसे संपत्ति और अनुबंध, समय के साथ अस्तित्व में आई हैं। हाल के दशकों में बड़ी मात्रा में विज्ञान संबंधी साहित्य परोसा गया है। परंतु एक सुंदर मूलपरक समीक्षा आईसलैंड के अर्थशास्त्री थायन इगस्टन द्वारा अपनी 'इकोनॉमिक बिहेवियर ऐंड द इंस्टीट्यूशन्स' (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1990) और ओलिवर ई. विलियम्स द्वारा अपनी 'इकोनोमिक इंस्टीट्यूशन ऑफ कैपिटलिज्म' (न्यूयार्कः दि फ्री प्रेस 1985) पुस्तकों द्वारा प्रस्तुत हुई है।

सहज व्यवस्था और सहयोग के अध्ययन के लिए ऐसा वृहत् साहित्य भी उपलब्ध है जिसमें 'आखेट सिद्धांत' की गणितीय और संकल्पनात्मक सामग्री या युक्तिपूर्ण संवाद के औपचारिक अध्ययन का प्रयोग हुआ है। अंग्रेज अर्थशास्त्री रॉबर्ट शुगडेन की 'दि इकोनॉमिक्स ऑफ राइट्स, कोऑपरेशन ऐंड वेल्फेयर'

(ऑक्सफोर्डः बेसिक ब्लैकवेल 1986) पुस्तक इस विषय के कम जानकारों के लिए भी आखेट सिद्धांत के साध्यों और तकनीकों का बेहतर परिचय देती है। (शुगडेन सहज व्यवस्था के अभ्युदय पर डेविड ह्यूम के अब तक के लेखन का कौशलपूर्ण विवरण देते हैं। माइकल टेलर की 'दि पौसिबिलिटी ऑफ कोऑपरेशन' (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1987) में गणितीय रूप से ज्यादा चुनौतीपूर्ण और तकनीकी दृष्टिकोण नजर आता है। आखेटों के सिद्धांत का एक अद्भुत प्रयोग वह है जिसमें कार्यक्रमबद्ध रणकौशल में कंप्यूटरीकृत प्रतियोगिताओं का इस्तेमाल कर इस बात का अध्ययन किया जाता है कि खास विपरीत परिस्थितियों (इसे कैदी की दुविधा कहते हैं) के अंतर्गत भी सहयोग किस तरह जन्म लेता है- यह राजनीतिशास्त्री रॉबर्ट एक्सेलरौड की 'दि इवोल्यूशन ऑफ कोऑपरेशन' (न्यूयॉर्कः बेसिक बुक्स 1984) पुस्तक में दिखता है।

सहज व्यवस्था का सबसे सिलसिलेवार ढंग से अध्ययन उन अर्थशास्त्रियों द्वारा किया गया, जिनके प्रयासों को ऐडम स्मिथ ने राह दिखाई थी। ऐडम स्मिथ ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'एन इन्क्वायरी इनटू दि नेचर ऐंड कासेज़ ऑफ दि वेल्थ ऑफ नेशन्स' 1776) में 'अदृश्य हाथ' (जो इस विषय की चर्चाओं में पहले से ही महत्वपूर्ण रहा है) रूपक का इस्तेमाल यह बताने के लिए किया कि किस तरह मनुष्य को 'किसी ऐसे साध्य को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित किया जाता है जो उसके उद्देश्यों का हिस्सा नहीं है। 'स्मिथ ने इस तरह अर्थशास्त्र के अधिकतर वैज्ञानिक शोध प्रारूपों को अगले दो सदियों तक के लिए निर्धारित कर दिया था। इसमें खास तौर पर उल्लेखनीय कृति है ऑस्ट्रिया के अर्थशास्त्री कार्ल मेंगर की 'प्रॉब्लम्स ऑफ इकोनॉमिक ऐंड सोशियोलॉजी' (1883; उर्बानाः यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनॉयस) जिन्होंने आधुनिक सामाजिक विज्ञानों को एक सुरक्षित आधार पर खड़ा करने में मदद की और मनुष्यों के क्रियाकलापों में व्यवस्था की जटिल प्रणालियों की तलाश की।

किसी आर्थिक घटना के अध्ययन के दायरे के अंदर भी सहज व्यवस्था की अवधारणा बाजार अर्थव्यवस्था की मूल्य प्रणाली तक ही सीमित नहीं है बल्कि मुद्रा व्यवस्था तक जा पहुंची है जिसके जरिये मूल्य अनुपातों को व्यक्त किया जाता है। कार्ल मेंगर ने 'प्रिंसिपल ऑफ इकोनॉमिक्स' (1871: न्यूयॉर्क, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी प्रेस 1981) में यह दिखाया है कि कैसे मुद्रा वस्तु विनिमय के अनभिप्रेत उत्पाद के रूप में जन्म लेती है और इस तरह विनिमय के और भी अधिक जटिल स्वरूपों को संभव बनाती है। वे संस्थान जो जटिल वित्तीय माध्यमों, जैसे बैंक नोट्स, का प्रावधान करते हैं बचत और ऋण दान की क्रियाओं के अनभिप्रेत उप उत्पादों के रूप में भी उभरते हैं। 'मुक्त बैंकिंग' के इतिहास को, जिसमें सहज वित्तीय व्यवस्थाएं और आर्थिक समन्विता की जटिल प्रणालियां स्वैच्छिक

अन्योन्यक्रियाओं से पैदा होती हैं- अर्थशास्त्री लॉरेन्स एच. व्हाइट द्वारा 'फ्री बैंकिंग इन ब्रिटेनः थ्योरी, एक्सपीरियंस ऐंड डिबेट', 1800-1845 कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1994) में भली-भांति परखा गया है। वैसे मुक्त बैंकिंग के आर्थिक विश्लेषण की समीक्षा जॉर्ज ए. शेल्जिन ने 'दि थ्योरी ऑफ फ्री बैंकिंगः मनी सप्लाई अंडर कम्पीटिटिव नोट इश्यू' (टोटोवा न्यू जर्सीः रोमैन ऐंड लिटिल फील्ड, 1988) में की है। (व्हाइट और शेल्जिन, दोनों ने ही यह साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि मुक्त बाजार प्रणाली केंद्रीयकृत राज्य नियंत्रित बैंकिंग के बनिस्बत बिना आर्थिक चक्रों के वृहत्तर स्थिरता देती है। मुक्त बाजार की समीक्षाएं बहुत अहमियत रखती हैं क्योंकि इनमें न सिर्फ ऐसे समाज की संभावनाएं दिखती हैं जिनमें राज्य सत्ता द्वारा दुरुपयोग एवं अकृत्य की सभी संभावनाओं के होते हुए भी अर्थव्यवस्था के 'निर्धारक शीर्षों' को नियंत्रित करना राज्य के लिए आवश्यक नहीं है बल्कि ये यह भी दर्शाती हैं कि व्यवस्था स्पष्ट रूप से वैसे बिंदुओं पर भी उभर सकती हैं और उभरती हैं जहां अक्सर इसे असंभव माना जाता है। बाजार अर्थव्यवस्था की मूल्य प्रणाली की सर्वव्यापक और व्यक्त महत्ता ने सहज व्यवस्था के अध्ययन में दिलचस्पी रखने वाले अर्थशास्त्रियों के लिए एक उपजाऊ जमीन प्रस्तुत की है। (देखें हयाक का पांडित्यपूर्ण लेख 'दि यूज़ ऑफ नॉलेज इन सासोइटी')। अतः यह समझा जा सकता है कि इस क्षेत्र में सहज व्यवस्था का क्रमबद्ध अध्ययन विकास की एक उच्चतर अवस्था में पहुंच जाए, परंतु इस वजह से हमें कानून, नैतिकता और विभिन्न प्रकार के मानव-अंतर्व्यवहार में सहज व्यवस्था की अहमियत को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए।

मुक्त बाजार एवं स्वैच्छिक संगठन

पूर्व अध्याय में सहज व्यवस्था की समस्या पर हुई चर्चा के आधार पर यदि हम उदारवादी चिंतन में बाजार प्रणाली और इसकी अहमियत का मूल्यांकन करें तो आसानी होगी। समाजवादी जब बाजार पर नजर डालते हैं तो उन्हें इसमें अव्यवस्था, अशांति और अविवेक दिखाई देता है, अतः वे इस बात पर जोर देते हैं कि विवेक की यही मांग है कि इस अराजक स्थिति पर राज्य की ओर से व्यवस्था की जाए। कार्ल मार्क्स ने स्वयं पूंजीवाद की 'अराजकता' की शिकायत की है, यही शिकायत मुक्त बाजार अर्थव्यवस्थाओं के संबंध में की गई लगभग सभी आलोचनाओं का मुख्य बिन्दु बन गई। उन समीक्षकों द्वारा सुझाया गया उपाय बस यही था कि बाजारों के स्वरूप को राज्य के एक या दूसरे प्रकार के दिशा-निर्देशों से बदल दिया जाए।

लुडविग वान मिसेस ने 1920 के अपने लेख 'इकोनॉमिक कैल्कुलेशन इन दि सोशलिस्ट कॉमनवेल्थ' में यह प्रश्न उठाया है कि क्या समाजवाद वास्तव में कुव्यवस्था को हटाकर व्यवस्था की स्थापना कर सकता है? यह बात अन्य लेखों के साथ एफ. ए. हयाक द्वारा संपादित 'क्लेक्टिविस्ट इकोनॉमिक प्लानिंग: क्रिटिकल स्टडीज ऑन दि पॉसिबिलिटीज ऑफ सोशलिज्म' (1935; क्लिफटन. न्यूजर्सी अगस्टस एम; केली पब्लिशर्स, 1975) में भी मौजूद है। मिसेस ने इस लेख और बाद की रचना 'सोशलिज्म: ऐन इकोनॉमिक एंड सोशियोलॉजिकल एनालिसिस' (1922; लंदन: जोनाथन केप, 1936-1951 में यह दलील दी है कि समाजवादी योजनाकार अपने निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने में सक्षम नहीं होंगे क्योंकि वे यह जान ही नहीं पाएंगे कि बाजार में संपत्ति अधिकारों के विनिमयों के परिणामस्वरूप कीमतों (या विनिमय अनुपातों) में आई कमी के समय किस तरह कम से कम मूल्य वाली वस्तुओं का उत्पादन किया जाए। उन्होंने अंत में कहा है कि ''समाजवाद विवेकपूर्ण अर्थव्यवस्था का उन्मूलन है।'' समाजवाद के सामने खड़ी यह चुनौती बाजार द्वारा आर्थिक गणना की समस्याओं का समाधान निकालने की प्रक्रिया के प्रति स्वाभाविक रूप से ज्यादा दिलचस्पी का माहौल तैयार करती है। एफ.ए. हयाक ने इस पुस्तक में संग्रहीत अपने लेख ''दि यूज ऑफ नॉलेज इन सोसाइटी'' में इस मसले पर विचार किया है, तथा यह स्थापित किया है कि बाजार अर्थव्यवस्था की समझ का सहज व्यवस्था की आम धारा के साथ मेल आधुनिक उदारवाद का केंद्रीय तत्व है, जिसकी वकालत मैंने ऊपर की है।

समाजवादी गणना से जुड़े कुछ और बेहतर चित्रणों में शामिल है डॉन लेवोई की कृति 'राइवलरी एंड सेंट्रल प्लानिंग: दि सोशलिस्ट कैलकुलेशन डिबेट रीकन्सीडर्ड'- कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1985; और उनकी ज्यादा लोकप्रिय और सुगम पुस्तक 'नेशनल इकोनॉमिक प्लानिंग: व्हाट इज़ लेफ्ट'? कैम्ब्रिज, मास: बालिंगर 1985, साथ ही डेविड रैमसे स्टील की 'फ्रॉम मार्क्स टू मिसेस' (ला सेले, III: ओपेन कोर्ट, 1992)। दूसरी तरफ थॉमस सोवेल ने 'नॉलेज एंड डिसीजन्स'- न्यूयॉर्क: बेसिक बुक्स, 1980; में यह समझाया है कि बिखरे हुए ज्ञान को कैसे जटिल सामाजिक व्यवस्थाओं में उपयोगी बनाया जा सकता है।

अर्थशास्त्र में अनेक उत्कृष्ट पाठ्यपुस्तकों की तरह कई आर्थिक प्रबंध भी लिखे गए हैं जिन्होंने बाजार अर्थव्यवस्था को समझने के लिए पाठक के सामने विस्तृत परिचय रखा है। इन सभी को पढ़ पाना या विस्तृत आर्थिक साहित्य के अंशमात्र को भी साधना संभव नहीं है, परंतु इनमें कुछ बेहद उल्लेखनीय रचनाएं हैं जिनका अध्ययन उन लोगों के लिए उपयोगी होगा जो उदारवादी राजनीतिक अर्थव्यवस्था

की तह तक जाना चाहते हैं। इनमें पहली रचना है लुडविग वॉन मिसेस की 'ह्यूमन ऐक्शन: ए ट्रीटीज ऑन इकोनामिक्स' (न्यू हेवन: येल यूनिवर्सिटी प्रेस 1949 और बाद के कई संस्करण), जो अर्थशास्त्र पर एक प्रबंध मात्र नहीं बल्कि ज्ञान का विशाल भंडार है। मिसेस मनोविज्ञान से पूंजी के सिद्धांत तक सामाजिक संगठन की समस्याओं का एक क्रमबद्ध दृश्य प्रस्तुत करते हैं। मिसेस का अनुसरण करते हुए उन्हीं के समान उत्कृष्ट प्रबंध शैली में मरे एन. रॉथबैंड ने अपनी किताब 'मैन इकोनॉमी ऐंड स्टेट' (लॉस एंजलिस: नैश 1970) लिखी जो मूलत: जर्मन भाषा में थी और इसमें प्रख्यात महाद्वीपीय विद्वान लुडविग की छाप स्पष्ट दिखती है। ज्यादातर अमेरिकी पाठकों के लिए यह कृति मिसेस की दूसरी रचनाओं की अपेक्षा सरल एवं सुगम है। रॉथबैंड ने इस प्रबंध की अगली कड़ी भी पेश की है, 'पावर ऐंड मार्केट: गवर्न्मेंट ऐंड इकोनॉमी' (द्वितीय संस्करण कन्सास सिटी, मो., शीद एन्ड्र्यूज और मैकमिल, 1977) जिसमें सरकार के हस्तक्षेप से संबद्ध अध्ययन पर ध्यान दिया गया है।

अर्थशास्त्र का अध्ययन आरंभ करने वालों के लिए सबसे अच्छी कृति है हेनरी हैजलिट की 1946 में प्रकाशित लघु पुस्तिका 'इकोनॉमिक्स इन वन लेसन' (द्वितीय संस्करण न्यू रौशेल, न्यूयार्क: आर्लिंग्टन हाउस, 1985) जिसमें समकालीन नीति के मुद्दों के प्रति महान परंपरागत अर्थशास्त्रियों की अर्न्तदृष्टि को प्रयुक्त किया गया है और ताजा ब्योरा पेश किया गया है।

बाजार इस लिहाज से अहमियत रखता है कि वह जातिवाद, जनजातिवाद और अविवेकपूर्ण पूर्वाग्रह को जीत सकता है, और बैर तथा युद्ध की जगह दोस्ती और शांति स्थापित कर सकता है। जैसे एफ.ए. हयाक को ग्रीक क्रिया-शब्दों (katallasso) का जिक्र करना भाता था, जिसका अर्थ है अपने गांव में स्वागत करना, दूसरों से मेल-मिलाप करना, शत्रु को दोस्त बनाना या चीजों की अदला-बदली करना। जैसा कि इतिहासकर जैफ्री पार्कर ने स्पेन के राजा की धार्मिक एवं कर-संबद्ध नीतियों के विरुद्ध उभरे डच विद्रोह के अध्ययन के दौरान गौर किया था कि तब राजा की नीतियों का ''उग्र विरोध'' था क्योंकि ''कई अन्य धर्मावलंबी ऐंटवर्प में व्यापार करने आए थे और यदि निवास संबंधी जांच-पड़ताल लागू की जाती तो हां की समृद्धि खत्म होने का डर था'' ('दि डच रिवोल्ट'- न्यूयार्क: वाइकिंग पेंग्विन, 1988, पृ:47)।

''बाजार अभिकरणों (एजेंसियों)'' और ''मूल्य प्रतिस्पर्धाओं'' के तमाम भाषायी रूपकों के बावजूद बाजार स्वैच्छिक अनुभव का मंच है, जैसा कि एडम स्मिथ ने अपनी 'लेक्चर्स ऑन ज्यूरिस्प्रूडेन्स' कृति में मूल्य प्रणाली की चर्चा करते समय सशक्त रूप से कहा है: ''यदि हम मनुष्य के मन के अंदर बसे आदर्श पर गौर करें, जिस पर वस्तु मजदूरी प्रथा (यानी व्यापार) का विधान तय करने की जिम्मेदारी

होती है, तो स्पष्ट होता है कि यह हर व्यक्ति की स्वाभाविक प्रवृति पर निर्भर है कि वह इसेक लिए कैसे तैयार हो। एक शिलिंग बढ़ाने का अर्थ हमारी नजर में बहुत ही सीधा और सरल है, पर वास्तव में यह किसी व्यक्ति को प्रस्तावित दलील है जो उसे किसी भी काम के लिए इस तरह तैयार करती है मानो वह उसके ही हित में है। (ऐडम स्मिथ, ''लेक्चर्स ऑन ज्यूरिसप्रूडेन्स''- इंडियनपोलिस: लिबर्टी क्लासिक्स, 1982; पृ. 352)

इस बात की हमेशा वकालत की गई है कि बाजार कई, बल्कि अधिकतर प्रयोजनों के लिए सही है, परंतु वह सिलसिलेवार ढंग से धराशायी भी होता है, अत: यह उसकी क्षतिपूर्ति अनिवार्य रूप से हो या फिर राज्य सत्ता उसे बलात् निरस्त कर दे। ''बाजार की असफलता'' का दृष्टिकोण इस बात पर जोर डालता है कि राज्य या तो उत्पादन तथा निश्चित वस्तुओं एवं सेवाओं (आमतौर पर जिसे, कुछ हद तक भ्रामक, 'विनियमन शब्द से इंगित किया जाता है) के विनिमय से संबद्ध व्यापार की स्थितियों को बदलने के लिए हस्तक्षेप करे या वस्तुओं और सेवाओं का खुद ही उत्पादन करे (जिसे सामान्यत: ''सार्वजनिक वस्तुओं'' का उत्पादन कहते हैं)।

समाजवादी गणना से जुड़ी बहस के निष्कर्षों का उपयोगी तरीके से मूल तत्वों पर आधारित बाजार अर्थव्यवस्था में सरकार के नियामक हस्तक्षेप के साथ किया गया प्रयोग हमें इजरायल किर्जनर के लेख 'दि पेरिल्स ऑफ रेग्युलेशन' में दिखाई देता है, जो उनकी पुस्तक 'डिस्कवरी एंड दि कैपिटलिस्ट प्रोसेस' (शिकागो: शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस, 1985) में संकलित है, जिसकी दलील है कि बाजार की अन्वेषी प्रक्रियाओं की राह राज्य द्वारा बल प्रयोग आधारित नियामक हस्तक्षेपों से छोटी हो जाती है। इसी के साथ ''सरकार की असफलता'' और सरकारी नियामक अभिकरणों के आदेशों के उपभोक्ताओं के लिए अहितकारी परिणामों के विषय पर प्रकाशित आनुभाविक शोध का एक वृहत संस्करण भी उपलब्ध है। (पाठक पुस्तकालय में जाकर 'जर्नल ऑफ पालिटिकल इकोनॉमी, दि जर्नल ऑफ लॉ एंड इकोनॉमिक्स, दि अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू, दि काटो जर्नल पब्लिक च्वाइस जैसे जर्नलों या अन्य कई आलेखों के रूप में उपलब्ध साहित्य का आनंद उठा सकते हैं।

सरकार की सफलता और मुक्त बाजार विकल्पों के इस विस्तृत विषय क्षेत्र से कुछ मुख्य बिन्दुओं को उठा कर मिल्टन तथा रोज फ्रायडमैन ने एक प्रचलित शैली में 'फ्री टू चूज' (न्यूयार्क: हाकोर्ट प्रेस जीवानोविच, 1980) में प्रस्तुत किया है, खासतौर से ''टू प्रोटेक्ट्स दि कंज्यूमर?'' और ''टू प्रोजेक्ट्स दि वर्कर?'' अध्यायों में।

सार्वजनिक वस्तुओं से जुड़े मुद्दों, जो सरकारी बल प्रयोग को न्यायसंगत ठहराने में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं, पर भी कई पुस्तकें लिखी गई हैं जिनमें सरकार द्वारा प्रामाणिक रूप से 'सार्वजनिक' वस्तुओं का उत्पादन करने की क्षमता के प्रति समीक्षात्मक रुख दर्शाया गया है और यह तथ्य भी उजागर हुआ है कि किस प्रकार स्वैच्छिक संगठन सार्वजनिक वस्तुओं का उत्पादन करने में सफल होते हैं।

सामान्यत: सार्वजनिक वस्तुओं को दो लक्षणों के आधार पर परिभाषित किया गया है; एक, जब सार्वजनिक वस्तु का उत्पादन हो जाता है, तब इसमें योगदान न करने वालों को इसके आनंद से वंचित रखना महंगा पड़ सकता है (अपवर्जन लागत), वस्तु का एक व्यक्ति द्वारा किया गया उपभोग किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उस वस्तु का उपभोग करने की राह में बाधा नहीं बनता है (गैरप्रतिस्पर्धी उपभोग)। सार्वजनिक वस्तु का प्रामाणिक उदाहरण कई वर्षों तक लाइटहाउस माना जाता रहा। बाजार इसका उत्पादन नहीं कर सकता। यह प्रकाश की किरणें फेंकता है, जिसे सब देख सकते हैं चाहे उन्होंने इसके लिए पैसे दिए हों या नहीं (भुगतान न करने वालों को इसे देखने से रोका नहीं जा सकता), और प्रकाश-किरण को देख लेने का यह अर्थ कतई नहीं होता कि अन्य लोग जब इसे देखेंगे तो उनके लिए प्रकाश की किरणें ''कम'' हो जाएंगी (गैर प्रतिस्पर्धी उपभोग) इस प्रतिमान को नोबेल पुरस्कार प्राप्त अर्थशास्त्री रोनाल्ड कोस ने अपने उत्कृष्ट लेख, ''दि लाइटहाउस इन इकोनॉमिक्स'' (जनरल ऑफ लॉ एंड इकोनॉमिक्स, खंड-17, संख्या-2, अक्टूबर 1974) में बखूबी निरूपित किया है। दि फर्म, दि मार्केट एंड दि लॉ' (शिकागो; यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1988) में यह पुन: मुद्रित हुआ था, जो लाइटहाउस से संबंधित वास्तविक इतिहास की जांच करता है कि कैसे इंग्लैंड में निजी उद्यम प्रकाशघरों का निर्माण करते थे और यह निष्कर्ष पेश करता है कि ''अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रकाशघर को ऐसी सेवा के उदाहरण के रूप में नहीं देखना चाहिए जो सिर्फ सरकार ही दे सकती थी।'' इससे मिलते-जुलते कई उदाहरण, साथ ही विषय से संबद्ध अनेक उत्कृष्ट लेखों को (इसमें सार्वजनिक वस्तुओं के लिए राज्य द्वारा किए गए प्रावधान से संबंधित पॉल सैम्युलसन का सशक्त चित्रण भी शामिल है) टायलर कोवेन द्वारा 'पब्लिक गुड्स एंड मार्केट फेल्यर्स: ए क्रिटिकल एक्जामिनेशन' (न्यू ब्रन्ज़विक, एन.जे. ट्रांजैक्शन पब्लिशर्स, 1992) में संकलित किया गया है, जो संभवत: इस विषय पर उपलब्ध लेखों का सर्वश्रेष्ठ संस्करण है।

अन्य उल्लेखनीय कृतियां हैं एंथनी डी जेसे की 'सोशल कॉन्ट्रैक्ट, फ्री राइड: ए स्टडी ऑफ दि पब्लिक गुड्स प्रॉब्लम' (आक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1989) और डेविड स्कमिड्ज की 'दि लिमिट्स

ऑफ गवर्नमेंट: ऐन एसे आन दि ऑब्लिक गुड्स आर्ग्युमेन्ट' (बोल्डर कोलो, वेस्टव्यू प्रेस, 1991) जिनमें आर्थिक पहलू के साथ ईमानदारी और न्याय से जुडे नैतिक सवालों को भी रखा गया है।

सार्वजनिक वस्तुओं से जुड़ी बहस की एक शाखा का सरोकार पर्यावरण से जुड़ा है। ''पर्यावरणीय अर्थशास्त्र'' हाल के वर्षों में खासतौर पर प्रासंगिक हो गया है, क्योंकि इस क्षेत्र में सरकार की उचित भूमिका को लक्षित कर कई नीति विषयक बहसें उठ खड़ी हुई है। रोनाल्ड कोस ने इस क्षेत्र से जुड़ी अधिकतर शोधपरक कार्यसूची पुनः अपने इस लेख द्वारा निरुपित की है- ''दि प्रॉब्लम ऑफ सोशल कॉस्ट'' (जनरल ऑफ लॉ एंड इकोनॉमिक्स 3, अक्टूबर 1960; दि फर्म, दि मार्केट, एंड दि लॉ में पुनः मुद्रित) जिसमें उन्होंने यह दिखाया कि ''बाह्यताओं'' (धुआं सामान्यतः 'नकारात्मक बाह्यता' माना जाता है, क्योंकि यह उन लोगों को नुकसान पहुंचाता है जो धुआं पैदा करने की निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा नहीं होते) की समस्या को संपत्ति अधिकार के अभाव के रूप में समझा जा सकता है; बाह्यता की अधिकतर समस्याएं इसलिए खड़ी होती हैं क्योंकि सरकार संपत्ति अधिकारों की रक्षा करने या उन्हें उचित रूप से परिभाषित करने में असफल रहती है। टेरी एल. एन्डर्सन तथा डोनाल्ड आर. लियल ने ''फ्री मार्केट इनवॉरान्मेन्टलिज्म'' (सेन फ्रांसिस्को: पैसिफिक रिसर्च इन्स्टिटट्यूट, 1991) में संपत्ति अधिकारों के दृष्टिकोण का इस्तेमाल कर पर्यावरण के अर्थशास्त्र पर एक सुंदर पठनीय प्रारंभिका पेश की है।

बाजारों के प्रति एक बड़ी आपत्ति यह जताई गई है कि वे आय का उचित 'वितरण' करने में असफल होते हैं'; बाजार न्यायसंगत नहीं होते हैं, या वे धन के राजनीतिक रूप से अस्थिर वितरण की स्थिति पैदा करते हैं, वे ''अमीरों का और अमीर बनना तथा गरीबों का और गरीब हो जाना'' जैसे लक्षणों के लिए जिम्मेवार होते हैं। परंतु पुनर्वितरणवाद की आचारिक नीतियों के दो उदारवादी विश्लेषण ऐसे हैं जिनमें आर्थिक विवेक की नियुक्ति के अलावा उत्पाद तैयार करने के प्रोत्साहनों- किसी की मेहनत का फल छिन जाने की स्थिति में - के व्यावहारिक विषय से सार लेकर फ्रांसीसी राजनीतिशास्त्री ब:ट्रान्ड डी जूवेनेल ने ''दि एथिक्स ऑफ रीडिस्ट्रिब्यूशन-1951; इंडियानापोलिस: लिबर्टी प्रेस, 1990 (जो इस संकलन में उद्धृत है) और जर्मन अर्थशास्त्री लुडविग लैचमन ने 'दि मार्केट इकोनॉमी एंड दि डिस्ट्रब्यूशन ऑफ वेल्थ'' (लुडविग लैचमन की कैपिटल, एक्सपेक्टशन्स, एंड दि मार्केट प्रोसेस- वाल्टर ई. ग्राइन्डर द्वारा संपादित; कन्सास सिटी, मो.: शीद एन्ड्रयूज एंड मैकमील, 1997 में बडेि सुंदर ढंग से पिरोया है। लैचमन ने अतिरिक्त रूप से ''स्वामित्व'' (या संपत्ति), जो एक कानूनी अवधारणा है तथा ''धन'', जो एक आर्थिक संकल्पना है, के बीच अंतर दिखाया है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि स्वामित्व परिवर्तन के बगैर धन नाटकीय रूप से बदल जाता है, क्योंकि किसी व्यक्ति की संपत्ति के मूल्य का

अन्य लोगों द्वारा मूल्यांकन किए जाने और उनकी उत्पादन योजनाओं में वह कितनी उपयुक्त बैठती है- इस आकलन के आधार पर घटता-बढ़ता रहता है। इस तरह जैसे लैचमन दर्शाते हैं, '' बाजार प्रक्रिया... एक समतलीकरण प्रक्रिया है। बाजार अर्थव्यवस्था में धन के पुनर्वितरण की प्रक्रिया सतत चलती रहती है जिसके सामने वे प्रक्रियाएं, जो बाहरी तौर पर एक-सी ही लगती है व जिन्हें आधुनिक राजनीतिज्ञ आदतन संस्था का स्वरूप प्रदान कर देते हैं, धूमिल होकर अपेक्षाकृत नगण्य साबित होती हैं।''

वास्तव में, धन निधि के हमेशा बदलते लक्षणों को जबरदस्ती ठीक करने के प्रयासों- कर आरोपण द्वारा और संपत्ति के बलात् पुनर्वितरण के अन्य तरीकों द्वारा- से अत्यंत अनचाहे परिणाम झेलने पड़ते हैं, जैसे कल्याणकारी राज्य के साथ हुए समकालीन अनुभव में दिखता है। समाजशास्त्री चार्ल्स मरे ने अमेरिका में गरीबों पर पुनर्वितरण के कारण पड़े प्रभावों का गहन अध्ययन किया है जो उनकी अद्भुत पुस्तक ''लूजिंग ग्राउंडः अमेरिकन सोशल पालिसी, 1950-1980 (न्यूयार्कः बेसिक बुक्स, 1984) में सर्वथा नए चिंतन के साथ प्रस्तुत हुई है। इसमें कल्याणकारी राज्य को नागरिक समाज तथा पारिवारिक जीवन के विघटन तथा पराश्रितता को बढ़ावा देने का जिम्मेदार ठहराया गया है। कल्याणकारी राज्य न सिर्फ परिवार जैसी संस्थाओं की जड़ें कमजोर करते हैं, बल्कि सिलसिलेवार तरीके से नागरिक समाज के कई अन्य संस्थानों को भी धराशायी कर देते हैं जो गरीबों की मदद करते हैं और एकता बनाए रखते हैं।

''परस्पर सहयोग'' के बहुउपेक्षित इतिहास को हाल में ही पुनर्जीवित किया गया है इसका आंशिक श्रेय जाता है ब्रिटिश इतिहासकार एवं राजनीतिशास्त्री डेविड ग्रीन के गहन ऐतिहासिक शोध को, खासकर ब्रिटेन में चिकित्सीय देखभाल के स्वैच्छिक प्रावधान से संबद्ध उनके अध्ययन, 'वर्किंग क्लास पेशेन्ट्स एंड दि मेडिकल इस्टैबिलशमेन्टः सेल्फ हेल्प इन ब्रिटेन फ्रॉम दि मिड'नाइन्टीन्थ सेंचुरी टू 1948' (न्यूयार्कः सेंट मार्टिन्स प्रेस, 1985) को जिसमें यह दर्शाया गया है कि किस तरह पहले नौकरीपेशा लोगों की उदारवादी संस्थाएं समाजीकृत दवाइयों के विरुद्ध लड़ रही थीं, और उनकी हाल की समीक्षा ''रिइन्वेन्टिंग सिविल सोसायटीः दि रीडिस्कवरी ऑफ वेलफेयर विदाउट पॉलिटिक्स'' (लंदनः इंस्टिट्यूट ऑफ इकोनॉमिक अफेयर्स, 1993) पर।

रिचर्ड कार्नुअल और डेविड बीटो ने अमेरिकी परिदृश्य का बारीकी से अध्ययन किया है। बीटो ने खास तौर पर अपने लेख 'म्युचुअल ऐड फॉर सोशल वेलफेयरः दि केस ऑफ अमेरिकन फ्रैटरनल सोसाइटीज' (क्रिटिकल रिव्यू-4 फाल 1990) में इसे पेश किया और कार्नुअल ने अपनी पुस्तक 'रिक्लेमिंग दि

अमेरिकन ड्रीमः दि रोल ऑफ प्राइवेट इंडिविजुअल्स एंड वोलेंटरी एसोसिएशन' (न्यू ब्रूंसविक, एंन. जे.: ट्रांजैक्शन, 1993) में। जैसा कि कार्नुअल और अन्य समीक्षकों ने इंगित किया है, मुक्त समाज एक ऐसा समाज है जिसकी विशेषता है स्वैच्छिक संबंध- बाजार विनिमय सिर्फ इसकी एक शाखा है। स्वतंत्र इकाई के रूप में विभिन्न प्रकार के संगठनों का अस्तित्व संभव हैं और आम भी, जैसे कल्याणकारी संस्थाएं, आत्म सहायक संगठन (जैसे अल्कोहलिक्स एनोनिमस- वह संगठन जिसके अंदर शराब की लत के शिकार व्यक्ति एक-दूसरे की मदद कर इस लत से छुटकारा पाते हैं), धार्मिक संस्थाएं इत्यादि। जिस तरह समाजवाद लाभ कमाने वाली इकाइयों की जगह वस्तु के उत्पादन को वरीयता देता है, वैसे ही कल्याणकारी राज्यवाद परस्पर सहायता संगठनों, परिवारों, चर्चों और मित्र संगठनों की जगह एकता, समाज के उर्ध्व विकास, और दुर्भाग्य के शिकार लोगों की देखभाल को अहमियत देता है। बाजार को समझने के लिए सबसे आवश्यक बिंदु यह है कि विभिन्न राष्ट्रों, धार्मिक संप्रदायों, जातियों के लोगों के बीच मैत्री और समन्वय की स्थापना हो। जिस तरह बाजार विनय के मंच हैं, वैसे ही ये शांतिपूर्ण सहयोग के अवसर भी हैं। ख्यात अर्थशास्त्री और इतिहासविद् थॉमस सोविल ने 'मार्केट्स एंड माइनोरिटीज' (न्यूयॉर्कः बेसिक्स बुक्स, 1982) पुस्तक में जातीय संबंधों के अर्थशास्त्रीय विश्लेषण को खूबसूरती से सामने रखा है। राज्य द्वारा बाजार में हस्तक्षेप करने से अल्पसंख्यकों पर पड़ने वाले विलोपन प्रभावों की वाल्टर विलियम्स ने 'दि स्टेट अगेंस्ट ब्लैक्स' (न्यूयॉर्कः मैकग्रा हिल 1982) में समीक्षा की है। आर्थिक इतिहासविद् जेनिफर रोबैक ने कई सर्वेक्षणों, जिसमें शामिल हैं: 'सदर्न लेबर लॉ इन दि जिम क्रो एराः एक्सप्लोएटेटिव और कंप्टीटिव?' 'यूनिर्वसिटी ऑफ शिकागो ला रिव्यू 51' (फॉल 1984) और 'दि पॉलिटिकल इकोनॉमी ऑफ सेग्रेगेशनः दि केस ऑफ सेग्रेगेटेड स्ट्रीट-कार्स' जर्नल ऑफ इकोनॉमिक हिस्ट्री 46 (दिसंबर 1986) में 'जिम क्रो' कानूनों के इतिहास पर प्रकाश डाला है जो अफ्रीकी अमेरिकियों और श्वेतों को बलपूर्वक अलगकर अफ्रीकी-अमेरिकियों को निचले दर्जे का मानता है। विधि प्राध्यापक डेविड बर्न्सटाइन ने " रूट्स ऑफ दि 'अंडरक्लास': दि डेक्लाइन आफ लेसेज़ फेयर ज्यूरिसप्रूडेन्स एंड दि राइज़ ऑफ रेसिस्ट लेबर लेजिस्लेशन" अमेरिकन यूनिवर्सिटी लॉ रिव्यू 43 (फाल 1993) और "लाइसेंसिंग लॉज़ः ए हिस्टोरिकल एक्जाम्पल ऑफ दि यूज़ ऑफ गवर्नमेंट रेग्यूलेटरी पावर अगेन्स्ट अफ्रीकन-अमेरिकन्स "सैन डियागो लॉ रिव्यू 31 (विंटर 1994) में ऊपरी तौर पर उदासीन दिखते नियमों की समीक्षा की है जिनका प्रभाव और कभी-कभी प्रयोजन यह था कि अफ्रीकी-अमेरिकियों को आर्थिक अवसर न प्राप्त हों। पूर्व राज्य हस्तक्षेपों के शिकारों की मदद करने के हाल के प्रयासों, जो मोटे तौर पर "सकारात्मक कार्य" के रूप में जाने जाते हैं, का विश्लेषण नागरिक अधिकारों के वकील

क्लिंट बोलिक ने 'दि अफरमेटिव ऐक्शन फ्रॉड' (वाशिंगटनः कैटो इंस्टीट्यूट 1996) में हमारे समक्ष रखा है।

अंततः हमने गौर किया कि न तो बाजार और न ही मानवीय अन्योन्य क्रिया का कोई भी स्वरूप "परिपूर्ण" है। जो लोग किसी आदर्श परिणाम के साथ बाजार अन्योन्य क्रियाओं के परिणाम की तुलना "बाजार असफलता," के साथ करते हैं उन्हें सरकार के प्रति भी यही नजरिया रखना चाहिए। एक परिपूर्ण सरकार के साथ अपरिपूर्ण बाजारों की तुलना, जो अमूनन बाजार के समीक्षकों का आम नजरिया होता है, के बनिस्बत हमें अपरिपूर्ण बाजारों की तुलना अपिरपूर्ण सरकारों के साथ करनी चाहिए। आर्थर सेल्डन ने अपनी विचारोत्तेजक किताब 'कैपिटलिज्म' (ऑक्सफोर्डः बेसिल ब्लैकविल 1990) में अनुदारवादियों की ओर रुख करते हुए अपरिपूर्ण सरकारों की तुलना अपरिपूर्ण बाजारों से की है जो बड़ी चतुराई से यह दर्शाती है कि बाजार मनुहार के लिए सरकार के बल प्रयोग को प्रतिस्थापित करने के कई प्रस्ताव वास्तव में कितने अविवेकपूर्ण हैं।

न्याय और राजनीतिक संगठन

ऊपर इस बात का दावा किया गया है कि अहार्य वैयक्तिक अधिकारों पर विश्वास उदारवाद की कसौटी है। अधिकार अनिवार्य रूप से दूसरों पर डाली गई बाध्यता होती है। इसलिए उदारवाद की प्रामाणिकता इसी में है कि मनुष्य किसी न किसी बाध्यता के अधीन रहे। आखिर वे बाध्यताएं हैं क्या? सामान्यतः हम यह कह सकते हैं कि बाध्यताएं "नकारात्मक " होती हैं। तात्पर्य यह है कि व्यक्ति को वैसे कार्यों से परहेज करना चाहिए जो दूसरे के अधिकारों के लिए हानिकारक हों। ऐसी बाध्यताएं एक तरह से सार्वभौमिक होती हैं क्योंकि वे सारे नैतिक प्रतिनिधियों पर बंधन रखती हैं। दूसरी तरफ वे "सहसंभव" हैं क्योंकि उन्हें एक ही समय में महसूस किया जा सकता है।

बेशक "सकारात्मक" बाध्यताएं भी होती हैं जैसे मैंने सुबह जो काफी पी, उसके लिए एक डॉलर देने की बाध्यता। यह एक खास बाध्यता हैः मुझे (किसी और को नहीं) कैफे के मालिक को एक कप कॉफी के लिए निर्धारित राशि अनिवार्य रूप से चुकानी चाहिए। जॉन लॉक और उदारवादी परंपरा के अन्य लेखकों ने इस बात पर बल दिया है कि ऐसी विशेष बाध्यताएं स्वीकृति पर आधारित होनी चाहिए। इसके विपरीत राष्ट्रवादियों, समाजवादियों, जातिवादियों और अन्य प्रकार के समूहवादियों ने सामान्यतः इस बिंदु पर जोर दिया है कि किसी व्यक्ति के हिस्से विशेष बाध्यताओं की पूरी पोटली ही आ जाती

है जिसके लिए उसने स्वीकृति नहीं दी थी लेकिन जिसके अधीन किसी खास राष्ट्र, वर्ग या जाति के सदस्य के रूप में उसका जन्म हुआ। (इन विचारों पर हुई कुछ बेहतर अभिव्यक्तियों पर इस पुस्तक के अंतिम भाग में उदारवाद के "समुदायवादी" समीक्षकों के शीर्षक के अंतर्गत चर्चा की गई है।)

अनुबंध रोमन कानून का केंद्रीय तत्व था जैसा कि महान रोमन न्यायवेत्ता गेईस ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'इंस्टीट्यूट्स' में कहा है: "अब हम बाध्यताओं की ओर रुख करें। प्रथम ये दो भागों में बंट जाती हैं: सारी बाध्यताएं किसी अनुबंध या दुष्कृति से जन्म लेती हैं।" (किसी नियम के उल्लंघन को या दूसरों के प्रति किए गए अपराध को दुष्कृति कहते हैं।) अमेरिका की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली इस दलील कि सरकार को अनुबंध के सिद्धांतों के आधार पर होना चाहिए, का इतिहास बड़ा लंबा है। (देखें इस पुस्तक में पुनःमुद्रित डिक्लेरेशन ऑफ इंडिपेन्डेन्स)।

प्रख्यात इतिहासविद् क्वेंटीन स्किनर ने अपनी 'फाउंडेशन ऑफ मॉडर्न पॉलिटिकल थॉटः वॉल्यूम-2 दि एज आफ रिफार्मेशन' (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1978) में कहा है "यह अवधारणा कि किसी भी वैध राज्य-व्यवस्था का जन्म स्वीकृति की एक क्रिया में ही होना चाहिए, निश्चित रूप से एक आम पांडित्यपूर्ण अभिव्यक्ति थी जिसे ओखाम के अनुयायियों ने अक्वीना से कमतर कतई नहीं आंका है" (पृष्ठ 163)। स्वीकृति, और सरकार "बदलने या खत्म करने" (थॉमस जेफरसन का वाक्यांश) संबद्ध लोगों के प्रतिधारित अधिकार की अहमियत का आम उदाहरण ऐरेगौन के राजाओं के सत्ताभिषेक समारोह के समय दिखता है जब इसकी वैध सीमाओं को पार करते हुए जनसमूह ने उद्घोषणा की थीः "हम, जो तुम्हारी तरह ही अच्छे हैं, इस शर्त के साथ तुम्हें अपना राजा बनाते हैं कि तुम हमारी स्वतंत्रता और विशेषाधिकार बनाए रखोगे; अगर ऐसा नहीं करोगे, तो नहीं बनाएंगे।"

प्रबुद्ध लेखक ऐल्जरनन सिडनी, जिन्हें अंग्रेज राजा की सेनाओं ने मार डाला था,(जिस वजह से जेफरसन ने उन्हें " शहीद सिडनी" का नाम दिया था) इस सिद्धांत को बड़ी ही स्पष्टता के साथ अपनी 'डिस्कोर्सेज़ कंसर्निंग गवर्नमेंट' (1698: कालिन जी. वेस्ट संपादित, इंडियानापोलिसः लिबर्टी क्लासिक्स, 1990) में स्वयं का परिचय देते समय इस प्रकार पेश करते हैं, " मैं उस सत्ता को न्यायोचित मानने से इनकार करता हूं जो स्वीकृति पर आधारित नहीं है।" जॉन लॉक ने अपनी 'सेकेंड ट्रीटी ऑफ गवर्नमेंट' में जोर देकर कहा है कि "किसी भी सरकार को उन लोगों की आज्ञाकारिता पाने का अधिकार है जिन्होंने स्वतंत्र रूप से इसे स्वीकृति न दी हो।"

ए. जॉन साइमन्स ने 'मॉरल प्रिंसिपल्स एंड पॉलिटिकल ऑब्लिगेशन' (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस 1979) और लॉक के सरकार संबद्ध चिंतन को और नवीन रूप में प्रस्तुत करते हुए ऑन 'दि एज ऑफ अनार्कीः लॉक, कंसेन्ट एंड दि लिमिट्स ऑफ सोसाइटी' (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस 1993) में व्यक्ति के ऊपर खास राजनीतिक संगठनों के प्रति असम्मतिपूर्ण विशेष बाध्यताओं की दलील की क्रमिक आलोचना की है। स्वीकृति के आधार पर वैयक्तिक अधिकारों की रक्षा के लिए सरकार को प्रेरित करने या संस्थानों को तैयार करने या दूसरे शब्दों में कहा जाए तो सरकार की वैधता को स्थापित करने के लिए कई प्रयास किए गए हैं। यह स्पष्ट है कि विश्व की ज्यादातर सत्ता (या राज्य, यदि हम ज्यादा व्यापक शब्द का इस्तेमाल करें तो) जनसमुदायों, जिनके ऊपर वे शासन कर रही हों, की सम्मति से नहीं जन्मी थीं। (तानाशाह, निरपेक्ष राजतंत्र और ऐसी ही अन्य शासन व्यवस्था इसके स्पष्ट उदाहरण हैं।) इस लिहाज से उदारवादी उन्हें निश्चित तौर पर वैध मान लेंगे। यही वजह है कि लाइजेंडर स्पूनर (इस संकलन में अपने लेख में) और अन्य कट्टर उदारवादियों ने यह तर्क दिया कि सभी तत्कालीन शासन व्यवस्थाएं अवैध थीं और कोई भी उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य नहीं था, जब तक कि उनके आदेश व्यक्ति द्वारा दूसरों के अधिकारों के सम्मान करने के स्वाभाविक और सार्वभौमिक रूप से उचित बाध्यताओं के समान न हों। कुछ उदारवादियों ने कहा है कि मुक्त बाजारों में प्रतिस्पर्धा करती लाभ कमाने वाली व्यावसायिक इकाइयां आक्रमण से बचाव करने में एकाधिकारक सत्ता की बजाय ज्यादा कुशल हैं और इस प्रक्रिया में वे मौलिक अधकारों का हनन भी नहीं करतीं। कम से कम आंशिक रूप से तो यह सच दिखता है क्योंकि अमेरिका में कानून बहाल करने वाले निजी अभिकरणों में नियुक्त लोगों (सुरक्षाकर्मी, जमानत-मुचलका भराने वाले जैसे लोग) की संख्या सरकार की नियुक्त पुलिस से कहीं अधिक है। यह भी देखा गया है कि निजी सुरक्षाकर्मियों द्वारा अधिकारों का उल्लंघन पुलिस या राज्य अधीन अन्य प्रवर्तन एजेंसियों के सदस्यों द्वारा किए गए उल्लंघन की तुलना में नाममात्र है। मॅरे एन. रॉथबार्ड ने अपनी पुस्तकों जैसे 'फॉर अ न्यू लिबर्टीः दि लिबर्टेरियन मैनिफेस्टो' (द्वितीय संस्करण न्यूयॉर्कः मैकमिलन 1978) में इस तर्क को व्यक्त किया है जिससे राबर्ट नाजिक को पूर्णतः सीमित एकाधिकारक शासन व्यवस्था का बचाव करने की प्रेरणा मिली- 'अनार्की स्टेट ऐंड यूटोपिया' (न्यूयॉर्कः बेसिक बुक्स 1974) इसमें सीमित सत्ता के, जो अधिकारों का हनन नहीं करती, पक्ष में एक पटु आकलन पेश करती है। रॉथबार्ड की यह दलील कि आक्रामकता से की गई रक्षा बाजार को मुहैया कराई गई सेवा के रूप में देखी जानी चाहिए, का बचाव विधि प्राध्यापक (और पूर्व अभियोजक) रैंडी बार्नेट ने भी अपने दो अंशों में लिखे गए लेखों, "पर्सुइंग जस्टिस इन अ फ्री सोसाइटीः पार्ट वन- पावर वर्सेज़ लिबर्टी; पार्ट टू-क्राइम प्रिवेन्शन एंड दि लीगल ऑर्डर" ('क्रिमिनल जस्टिस एथिक्स समर/फॉल

1985', विंटर/सि्प्रंग 1986) में किया है। अर्थशास्त्री ब्रूस बेन्सन 'दि इंटरप्राइज ऑफ लॉ' (सैन फ्रांसिस्कोः पैसेफिक रिसर्च इंस्टीट्यूट 1990) में कानून के स्वैच्छिक प्रावधान के आर्थिक विश्लेषण और इसका उपयोगी इतिहास हमारे सामने रखते हैं। (ऐसे दृष्टिकोण आम तौर पर इस दावे पर आधारित होते हैं कि प्रत्यानयन या पीड़ित को सामान्य बनाना, पीड़ित को सामान्य बनाए बगैर अपराधी को सजा देना उसे नुकसान पहुंचाने से ज्यादा जरूरी है, और प्रत्यानयन को प्राप्त करने का लाभ एक ज्यादा कुशल और मानवीय कानून व्यवस्था को जन्म दे सकता है। विलियम आई. मिलर की 'ब्लडटेकिंग ऐंड पीसमेकिंगः फ्यूड, लॉ, एंड सोसाइटी इन सागा आईसलैंड'- शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस 1990) और जे.सी. बायोक की 'मिडिएवल आईसलैंड (बर्कलीः यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस 1988), में इस तथ्य की प्रबुद्ध और आकर्षक समीक्षा की गई है कि किस तरह एक सत्ताविहीन समाज में एक प्रत्यानयन आधारित कानून प्रणाली काम करती है। रॉथबार्ड ने जिस स्वरूप की वकालत की है, उसे अक्सर गलत समझा गया है। कारण, कभी-कभी उनकी रचनाओं में यह दिखता है मानो कानून और न्याय वस्तुमात्र हैं जो मुक्त बाजार में हैमबर्गर और बाग में डालने वाली खाद की तरह खरीदे जा सकते हैं। पर कानून और न्याय ही बाजार को तय करने वाले कारक हैं इसलिए उन्हें बाजार के उत्पाद के रूप में देखना विरोधाभासी न होते हुए भी बेतुका तो है ही। इस गलतफहमी को सरकार के संविदात्मक स्वरूपों को परीक्षण द्वारा सही किया जा सकता है जिसमें कोई व्यक्ति खास वस्तुओं को "खरीदता" नहीं है बल्कि उन नियमों को खरीदता या स्वीकार करता है जो अंततः उसी पर अंकुश रखते हैं। सबसे ज्ञानवर्द्धक विवरण वे हैं जो वास्तव में मौजूद संविदात्मक शासनों जैसे पड़ोसी संघों, सहशासित संघों और "स्वत्वाधिकारी समुदायों" विषयों के बारे में दिए गए हैं। अर्थशास्त्री डोनाल्ड जे. बोड्रॉक्स और रैंडॉल जी. होल्कम्बी के लिखे लेख "गवर्नमेंट बाई कांट्रैक्ट" पबिल्क फाइनेंस क्वार्टली खंड-17 क्रम 3, 1989 में सार्वजनिक वस्तुओं के संविदात्मक प्रावधान के स्वरूप को दिखाया गया है जिसमें मध्यस्थता और सुरक्षा भी शामिल है। फ्रेड फोल्डवरी ने इसी दृष्टिकोण को अपनी बेहतरीन कृति 'पब्लिक गुड्स एंड प्राइवेट कम्युनिटीज़ः दि मार्केट प्रोविजन्स सोशल सर्विसेज़' (ऐल्डरशॉट, यू.के. एडवर्ड एल्गर 1994) में और विस्तार दिया है। अन्य उदारवादियों ने ऐसी वैधता के लिए आवश्यक सर्वसम्मति हासिल करने की परेशानियों की ओर इंगित करते हुए सर्वसम्मति को किसी व्यक्ति के लिए एक ऐसा आदर्श बिंदु बताया जिसकी वह आकांक्षा तो करता है पर जरूरी नहीं कि यह सच भी हो जाए। इस दृष्टिकोण से जुड़े प्रभावी उदाहरण जो "सार्वजनिक चयन" या संवैधानिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र से उठाए गए हैं तथा जेम्स बुकानन और गोर्डन ट्यूलॉक की रचनाओं में दिखते हैं। खास तौर पर बुकानन की 'दि लिमिट्स ऑफ लिबर्टीः बिटविन अनार्की ऐंड लवाइथन'- शिकागो, यूनिवर्सिटी ऑफ

शिकागो प्रेस 1975) और गोर्डन ट्यूलॉक की 'दि कैलकुलस ऑफ कन्सेंट' (ऐन आर्बरः यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन, 1962 में मिलते हैं। (इसी तरह शासन की वैधता के संबंध में एक अन्य सशक्त नजरिया रिचर्ड इप्सटाइन की 'सिंपल रूल्स फॉर अ कांप्लेक्स वर्ल्ड' में मिलता है।) अहार्य अधिकार शासन की वैधता सिद्ध करने में अहम भूमिका निभाते हैं क्योंकि हमारे कुछ अधिकार अहस्तांतरीय हैं। जैसा कि थॉमस जेफरसन ने डिक्लेरेशन ऑफ इंडिपेन्डेन्स' में कहा है। यदि हम इन अधिकारों को किसी अन्य व्यक्ति को देना भी चाहें तो नहीं दे सकते क्योंकि यह हमारी प्रकृति के विरुद्ध होगा। "स्वैच्छिक दासता" संभव नहीं, वैसे ही जैसे गोलाकार घन या जीवित शव संभव नहीं है। इस तरह एक निरंकुश शासन जो हमें बर्बाद करने या हमारी सारी स्वतंत्रता छीन लेने का प्रयास करता है, तथ्यतः अवैध कहलाएगा। शासन की वैध शक्ति की अपनी सीमाएं हैं बेशक यह स्वीकृति की आरंभिक क्रियाओं से बनी हों। वैध शासन के उद्भव और इनकी सीमाओं के मानक या धर्मसूत्रीय उदारवादी विवरण को (जॉन लॉक की 'सेकेंड ट्रीटी ऑफ गवर्नमेंट', खास तौर पर "ऑफ दि बिगनिंग ऑफ पॉलिटिकल सोसाइटीज़" और "ऑफ दि डिसोल्यूशन ऑफ गवर्नमेंट" अध्यायों में पाया जा सकता है।

हिंसा और राज्य

अगर दुनिया के अधिकतर राज्य अवैध हैं, तो उनके पास आखिर वे अनुचित शक्तियां कहां से आ गईं जिन पर वे प्रभावी रूप से हक जतलाते हैं? इसका ऐतिहासिक जवाब बिल्कुल स्पष्ट है जो थॉमस पेने ने अपनी पुस्तक 'कॉमन सेन्स' में अंग्रेजी राजतंत्र की वैधता के दावों को खारिज करते हुए दिया हैः "अपने होशो-हवास में कोई भी व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि विजेता विलियम के अधीन रहना उनके लिए सम्माननीय है। एक फ्रांसीसी वर्णसंकर का सशस्त्र लुटेरों की टोली के साथ आना और इंग्लैंड के निवासियों की इच्छा के खिलाफ वहां का राजा बन बैठना, सीधे शब्दों में बहुत तुच्छ भोंडी वास्तविकता लगती है। इसमें निश्चित तौर पर कोई भी दैवी योग नहीं।" राज्यों का जन्म विजय से होता है और युद्ध के जरिये इनका पोषण।

यदि हम राज्यों के उद्भव को धन संचय (विषय को समझने का यह एकमात्र तरीका तो नहीं लेकिन निश्चित रूप से यह उपयोगी तो है ही) के विभिन्न साधनों के परिप्रेक्ष्य में देखें तो जर्मन समाजशास्त्री फ्रांज़ ओपनहायमर का एक उपयोगी प्रबंध दि स्टेट (1914: न्यूयार्कः फ्री लाइफ एडिशन्स, 1975) हमारी जिज्ञासा को शांत करता है। ओपनहायमर ने उल्लेख किया है कि "दो आधारभूत विपरीत साधन ऐसे

हैं जिनके सहारे जीविका की अपेक्षा करने वाला मनुष्य अपनी आकांक्षाओं को संतुष्ट करने के आवश्यक साधनों को हासिल करने के लिए विवश है।" उन्होंने पहले वाले साधन को "आर्थिक साधन" बताया है और बाद वाले को "राजनीतिक साधन।" उन्होंने लिखा है "राज्य राजनीतिक साधनों का एक संगठन है।" (अलेक्जैंडर रस्टो के शोध प्रबंध फ्रीडम एंड डोमिनेशनः ए हिस्टोरिकल क्रिटिक ऑफ सिविलाइजेशन, जिसकी चर्चा ऊपर हुई है, में यह लिखा गया है कि विजय की प्रक्रिया से राज्य का जन्म होना सभ्यता के इतिहास का हिस्सा रहा है।

"युद्ध राज्य का निर्माण करता है और राज्य युद्ध छेड़ते हैं।" संबद्ध शोध प्रबंध को चार्ल्स टिली द्वारा और विकसित किया गया है (खास तौर पर उनके लेख "वार मेकिंग एंड स्टेट मेकिंग ऐज़ आर्गेनाइज्ड क्राइम" जो है पीटर इवान्स, डायट्रिच रूज़ चेमर और टेडा स्कॉपल संपादित ब्रिंगंग दि स्टेट बैक इन (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1985) में संकलित है और उनकी किताब 'कोअर्शन, कैपिटल एंड यूरोपियन स्टेट्स, ई. 990-1992' (ऑक्सफोर्डः ब्लैकवेल, 1992) में और राजनीतिशास्त्री ब्रूस डी. पौटर रचित 'वार एंड दि राइज़ ऑफ दि स्टेटः दि मिलिटरी फाउंडेशन ऑफ मॉडर्न पॉलिटिक्स' (न्यूयॉर्कः फ्री प्रेस 1994) में और बेहतर तरीके से वर्णित है। (इस विषय पर एक अन्य अध्ययन जाने-माने इतिहासकार ओट्टो हिन्ज़ का है "मिलिटरी आर्गेनाइजेशन एंड दि आर्गेनाइजेशन ऑफ दि स्टेट", जो फेलिक्स गिलबर्ट संपादित 'दि हिस्टोरिकल ऐसेज़ ऑफ ओट्टो हिन्ज़' (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1975) में मौजूद है। राजनीतिशास्त्री आर. जे. रुमेल ने 'डेथ बाई गवर्नमेंट' (न्यू ब्रूंसविक एन.जेः ट्रांजैक्शन 1994) में इस सदी में राष्ट्रों द्वारा मारे गए लोगों का दहला देने वाला आंकड़ा रखा है। 'एक्सक्लूडिंग वार डेड' में वे कहते हैं कि 1900 और 1987 के बीच "जातिसंहार, राजनीतिक जनसंहार और नरसंहार के अलावा शासन द्वारा मार डाले गए" लोगों की संख्या 169, 202, 000 है। उदारवादियों ने अक्सर यह सवाल किया है कि कोई भी व्यक्ति इस तरह के रक्त रंजित और क्रूर इतिहास वाले संस्थान से समूहवादियों द्वारा निर्धारित उत्कृष्ट और मानवीय उद्देश्यों को पूरा करने की उम्मीद कैसे कर सकता है? हालांकि इन समूहवादी दलीलों पर कोई विवाद नहीं छिड़ा, फिर भी ये प्रयोजनों को हासिल करने के लिए चुने गए साधनों के औचित्य के बारे में सवाल जरूर खड़े करती हैं। राज्य का युद्ध के साथ संबंध सुदूर ऐतिहासिक अतीत में ही सीमित नहीं बल्कि बीसवीं सदी के अनुभव में भी यह प्रत्यक्ष दिखता है जब शासन की शक्ति में युद्ध के जरिये बेतहाशा वृद्धि हुई है। अमेरिकी राज्य के विकास और युद्ध के साथ इसके संबंध का एक बहुत ही अच्छा ऐतिहासिक अध्ययन आर्थिक इतिहासकार रॉबर्ट

ह्विग की 'प्राइसेज़ एंड लवाइथनः क्रिटिकल एपिसोड्स इन दि ग्रोथ ऑफ दि अमेरिकन गवर्नमेंट' (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,1987) में दिखता है।

अक्सर यह माना गया है कि हिंसा के ऊपर सैन्य संगठित क्षेत्रीय एकाधिकार का अभ्युदय (यानी राज्य), जो विजय के जरिये अपनी शक्ति बढ़ाते हैं, ही राजनीतिक संगठन का एकमात्र संभव या स्वाभाविक स्वरूप है। वैसे हेन्ड्रिक स्प्रूइट ने इसके खिलाफ उदाहरण दि सॉवरन स्टेट एंड इट्स कंपीटटर्सइसके खिलाफ उदाहरण (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994) में इसके खिलाफ उदाहरण प्रस्तुत किया है जो राजनीतिक संगठनों के अन्य स्वरूपों की जांच करता है- ये अक्सर ज्यादा स्वैच्छिक प्रकृति के होते हैं-जैसे जर्मन व्यापारियों की हैन्सिटिक लीग और गैरक्षेत्रीय संगठन के स्वरूप, जैसे रोमन चर्च और होली रोमन एम्पायर। क्षेत्रीय एकाधिकार हासिल करने वाले और उन्हें वैध ठहराने वाले संस्थानों में ही लागतों के "सामाजीकरण" की क्षमता होती है, यानी एक "नियंत्रित" जनसंख्या में लागत को बांटना। एक बड़े जनसमुदाय में अपेक्षाकृत छोटी लागत को थोपने से अधिक धन इकट्ठाकर इसे अपेक्षाकृत कम लोगों को सौंपा जा सकता है। इस प्रक्रिया को तकनीकी अर्थशास्त्रीय साहित्य में "किराया लेना" कहते हैं और यह विभिन्न "संचालन लागतों" द्वारा संभव होता है जिसका सामना छोटे और बड़े समूह करते हैं। जैसा कि मिल्टन फ्रीडमैन ने गौर किया है कि हर देश जहां जनसंख्या का बड़ा भाग किसानों से बना होता है, वहां उनका अत्यधिक शोषण होता है और उनके लाभ का ज्यादातर हिस्सा अपेक्षाकृत छोटी शहरी आबादी को हासिल हो जाता है। पर जहां किसान अल्पसंख्यक है, वहां वे सरकार द्वारा उच्च मूल्य सुनिश्चित करने, अतिरिक्त माल को बाजार दर से कहीं अधिक कीमत पर खरीदने, एकड़वार आवंटन करने, कृषि नहीं करने के एवज में भुगतान करने, और इसी तरह के और प्रयासों के जरिये बहुसंख्यक शहरी आबादी से कहीं अधिक धन प्राप्त कर लेते हैं। यह एक विरोधाभास है- कम से कम लोकतांत्रिक व्यवस्था में तो है ही। जब हम देखते हैं कि जानकारी इकट्ठा करने और संगठित (एकसमान हितों के आधार पर एक-दूसरे की पहचान करने, एकजुट होने, उद्देश्यों पर सहमत होने जैसी चीजें) करने की लागतें बड़े समूहों के लिए बहुत अधिक हो सकती हैं लेकिन अपेक्षाकृत छोटे समूहों के लिए असमानुपाती रूप से कम होती हैं, तो इसे बड़ी आसानी से समझा जा सकता है। जैसा कि समाजशास्त्री गेटैनो मोस्का ने वर्ग विवाद पर लिखी अपनी उत्कृष्ट रचना में व्यक्त किया है " एकल आवेग का पालन कर रहा एक संगठित अल्पमत समूह असंगठित बहुमत पर अपरिहार्य रूप से आधिपत्य जमा लेता है। बहुमत वर्ग का कोई भी एक व्यक्ति अल्पमत सत्ता की शक्ति का प्रतिरोध नहीं कर सकता क्योंकि वह संगठित अल्पमत की समग्रता का सामना कर रहा होता

है। उधर, अल्पमत के संगठित होने की एकमात्र वजह उनका अल्पसंख्यक होना है। किसी संगीत सभा में एकसमान समझ के साथ भाग ले रहे सौ लोग उन हजार लोगों पर विजयी होंगे जो परस्पर संगति में नहीं हैं। साथ ही पहले वाले समूह का संगीत सभा में भाग लेना और परस्पर समझदारी बनाए रखना ज्यादा आसान इस वजह से भी है कि वे संख्या में सौ हैं, हजार नहीं। इसलिए निष्कर्ष यह निकलता है कि राजनीतिक समुदाय जितना विशाल होगा, शासन कर रहे अल्पसंख्यक और शासित बहुसंख्यक के बीच का अनुपात उतना ही छोटा होगा। उससे कहीं अधिक मुश्किल होगा बहुसंख्यकों का अल्पमत सत्ता के विरुद्ध प्रतिक्रिया जुटाना।" (गेटैनो मोस्का, दि रूलिंग क्लास-1896 न्यूयार्क मैकग्रा हिल 1939 पृष्ठ 53).

धन हस्तांतरण संबंधी यह अध्ययन वित्तीय सिद्धांत पर इटली की विचारधारा वाले सदस्यों के लिए बहुत दिलचस्प था। उनमें से ज्यादातर उदारवादी थे और उन्होंने इस विषय को एक विज्ञान का दर्जा दिया था। यहां उल्लेखनीय है कि समाजशास्त्री विलफ्रेदो परेटो (देखें एस.ई. फाइनर संपादित विलफ्रेदो परेटो: सोशियोलॉजिकल राइटिंग्स; टोटोवा, एन.जे.: रोमन और लिटिलफील्ड 1976 खासकर पृष्ठ 114-20, 137-42, 162-64, 270, 276-78, 315-18) ने इसे "लूट" का नाम दिया था। परेटो और उनके सहयोगियों ने 'तर्कसंगत अज्ञानता' की घटना और विशेष हितों की निरंकुशता को चिरस्थायी बनाए रखने में इसकी भूमिका को उजागर किया है। जैसे परेटो ने लिखा है, "बहुत सारे आर्थिक मसले इतने जटिल हैं कि गिने-चुने लोग भी उन्हें सतही तौर पर ही समझ पाए हैं। चीनी का इस्तेमाल करने वाले हजारों लोगों में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो इसके उत्पादन व आर्थिक सहायता समीकरण के अंतर्गत इस्तेमाल हुई धनराशि की बाबत जानकारी रखता होगा।" परेटो ने इस छोटी जानकारी के जरिये विस्तार से बताया है कि किस तरह राज्य लागत को बड़े समूह में फैलाकर लाभ को केंद्रीकृत कर सकता है: 'मान लें कि 3 करोड़ जनसंख्या वाले एक देश में एक प्रस्ताव रखा गया है कि हर व्यक्ति को किसी ने किसी नाम से हर साल एक फ्रैंक देना होगा और प्राप्त राशि 30 लोगों में बांटी जाएगी तो हरेक दानकर्ता साल में एक फ्रैंक देगा और प्रत्येक लाभग्राही को हर साल 10 लाख फ्रैंक मिलेंगे। ये दो समूह इस स्थिति के प्रति भिन्न तरीके से प्रतिक्रिया करेंगे। साल में 10 लाख फ्रैंक पाने वाले लोगों के रात-दिन का चैन खत्म हो जाएगा। वे वित्तीय प्रलोभनों द्वारा अखबारों को अपनी मर्जी के अनुसार चलाकर तमाम वर्गों से अपने लिए समर्थन जुटाने लगेंगे। कुछ ऐसे भी होंगे जो चतुराई से जरूरतमंद विधायकों के, और तो और मंत्रियों (सरकार के) की भी, मुट्ठी गर्म करने से नहीं चूकेंगे...ठीक इसके विपरीत वह व्यक्ति जिसे प्रति वर्ष एक फ्रैंक का नुकसान उठाना है- चाहे वह इस

चलन से पूर्णतः अवगत क्यों न हो- इतनी छोटी सी बात के लिए न तो पिकनिक के कार्यक्रम का त्याग करेगा, न ही अपने सुहृद या प्रिय मित्रों से झगड़ा करेगा और न ही मेयर या प्रेफेट से वैर मोल लेगा। इन परिस्थितियों में परिणाम यही निकलेगाः लुटेरे ही पूर्णतः विजयी होंगे।'

शासन की नीति के वैज्ञानिक अध्ययन के प्रणेताओं में उल्लेखनीय हैं, गोवानी मॉन्टमार्टिनी (उनकी कृति 'दि फंडामेन्टल प्रिन्सिपल्स ऑफ ए प्योर थ्योरी ऑफ पब्लिक फाइनेंस', देखें जो रिचर्ड ए. मसग्रेव और ऐलन टी. पीकॉक द्वारा संपादित क्लासिक इन दि थ्योरी ऑफ पब्लिक फाइनेंस - तृतीय संस्करण; न्यूयार्क: सेंटर मार्टिन्स प्रेस, 1994, में संकलित है), एमिलकेयर पवियानी, मैफियो पैन्टेलियोनी और युद्ध के बाद इटली में स्थापित गणतंत्र के पहले राष्ट्रपति लुइगी इनाउडी। अर्थशास्त्र में नोबेल पुरस्कार प्राप्त जेम्स बुकानन अपने लेख में 'इटली - विचार पद्धति' में अर्थशास्त्रीय सार्वजनिक चयन की जड़ों की विवेचना प्रस्तुत करते हैं- 'ला सायन्ज डेले फायनान्ज: दि इटैलियन ट्रैडिशन इन फिस्कल थ्योरी', जो उनकी किताब 'फिस्कल थ्योरी ऐंड पॉलिटिकल इकोनॉमी' (चैपेल हिल: यूनिवर्सिटी ऑफ नार्थ कैरोलिना प्रेस, 1960) में संकलित है।

जटिल समाज-व्यवस्थाएं जिस प्रकार सामाजिक अंतर दर्शाने वाली सरल मालिक/किसान व्यवस्थाओं से ऊपर विकसित हो चुकी हैं, तो ऊपरी तौर पर ऐसा लगता है मानो हर व्यक्ति किसी आर्थिक या सामाजिक अल्पसंख्यक वर्ग का सदस्य है, हर व्यक्ति के मन में यह लालसा जागती है कि विशेष समर्थनों और आर्थिक सहायता के जरिये वह अनेक लोगों से धन वसूल ले। अतः, जैसा फ्रेडरिक बैस्टियट ने गौर किया है, आधुनिक समय में, "राज्य वह महान काल्पनिक सत्ता है जिसके द्वारा हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की कीमत पर जीने की प्रवृति दर्शाता है" (बैस्टियट की किताब 'सेलेक्टेड एसेज ऑन पॉलिटिकल इकोनॉमी': इर्विंग्टन- ऑन हडसन, एन.वाई.: फाउंडेशन फॉर इकोनॉमिक एजुकेशन, 1968; में शामिल लेख "दि स्टेट" में) धन की बलात् वसूली को अर्थशास्त्रीय साहित्य में "भाड़ा लेना" कहा गया है (जो थोड़ा दुर्भाग्यपूर्ण है)। यह एक ऐसा शब्द है बुकानन के अनुसार जिसका ''संस्थागत विधानों में दिखने वाले व्यवहार के वर्णन के लिए प्रारूप तैयार हुआ है, जहां मूल्य को अधिकतम करने के प्रयासों से सामाजिक आधिक्य की जगह सामाजिक अवशिष्ट ज्यादा उत्पन्न होता है।"

इस प्रणाली, जिसे बैस्टियट ने "अन्योन्य लूटमार" कहा है और तकनीकी अर्थशास्त्र विज्ञानी "भाड़ा लेने वाला समाज" कहते हैं, के क्रमबद्ध अध्ययन ने इतने विशाल साहित्य कोश को खड़ा किया है जिसे पूरी तरह खंगालना अभी संभव नहीं है। फिर भी जेम्स एम. बुकानन, राबर्ट डी. टॉलिसन और गोर्डन

ट्यूलॉक संपादित 'टुवॉर्ड ए थ्योरी ऑफ ए रेन्ट-सीकिंग सोसायटी' (कॉलेज स्टेशनः टेक्सास ए ऐंड एम. यूनिवर्सिटी प्रेस, 1980) को पढ़ना एक अच्छी शुरूआत होगी।

राज्य की गतिविधि के आर्थिक और सामाजिक विश्लेषण और ऐतिहासिक अध्ययन से उदारवादियों ने जो निष्कर्ष निकाला है, उसके अनुसार यदि राज्य अन्य स्वैच्छिक प्रकार के संगठन द्वारा प्रतिस्थापित नहीं होता है तो इसे अनिवार्यतः सावधानीपूर्वक सीमित कर देना चाहिए। यदि आवश्यकता पड़े तो भी राज्य, थॉमस पेने द्वारा कॉमन सेन्स में कहे गए शब्दों के अनुसार "एक अनिवार्य बुराई" है, जिस पर हमेशा निगरानी रखनी चाहिए और जिससे हमेशा बचना चाहिए। एलियन और सेडिशन एक्ट्स का विरोध करने वाले 1798 के केन्टुकी रिजोल्यूशन के समय थॉमस जेफरसन ने इस बात पर बल दिया कि "मुक्त शासन की नींव ईर्ष्या है, न कि आत्मविश्वास; यह आत्मविश्वास नहीं; बल्कि ईर्ष्या है, जो सीमित संविधानों का निर्धारण करती है और उनके आगे नतमस्तक होने के लिए विवश करती है जिनकी शक्ति पर विश्वास करने के लिए हम बाध्य हैं।" आतंरिक रूप से राज्य पर संविधान और एक सचेत जनसमुदाय का अंकुश रहना अनिवार्य है, और विदेशी संबंधों के मामले में बाहरी देशों के साथ विवाद की स्थितियों से परहेज करना। अपने विदाई संबोधन में जॉर्ज वाशिंगटन ने सलाह दी थी, ''विदेशी राष्ट्रों के साथ हमारे आचार का सर्वोपरि नियम यह है कि उनके साथ व्यावसायिक संबंधों का विस्तार करते समय हम उनके साथ जितना संभव हो उतना कम "राजनीतिक" संपर्क रखें।" शांति और अंतरराष्ट्रीय सामंजस्य बहाल करने का यही कारण उदारवादियों को व्यापार की स्वतंत्रता को समर्थन देने के लिए सैद्धान्तिक रूप से प्रेरित करता है क्योंकि व्यापार से संबद्ध संबंधों के बनने से हितकारी और मैत्रीपूर्ण सन्धियों की स्थापना होती है और युद्ध की स्थिति टाली जा सकती है। जैसा कि वाशिंगटन ने अपने विदाई संबोधन में जोर दिया, "मानवता, नीति और हित का यही कहना है कि समस्त राष्ट्रों के साथ सामंजस्य और उदार संवाद स्थापित हो।" (जेफरसन की ज्यादातर जरूरी रचनाएं मेरिल डी. पीटरसन संपादित 'दि पोर्टेबल जेफरसन' (न्यूयार्कः वाइकिंग प्रेस, 1975), में मौजूद है। वाशिंगटन की लेखनी का एक अच्छा संग्रह है डब्ल्यू. बी. एलेन संपादित 'जॉर्ज वाशिंगटनः ए कलेक्शन, इंडियानापोलिस' (लिबर्टी क्लासिक्स, 1988)।

उदारवाद के आलोचक

जब भी स्वतंत्र और समान दर्जे के व्यक्तियों से बने ऐसे समाज की कामना की गई जहां उनके बीच का संबंध संपत्ति आधारित हो न कि बल प्रयोग आधारित। आलोचकों ने हमेशा इसका प्रतिवाद किया है और कहा है कि ऐसी व्यवस्था अव्यवहार्य, अशांतिपूर्ण और अनैतिक होगी और लोग एक दूसरे के वैरी होकर वर्चस्व की लड़ाई में भिड़ जाएंगे। साथ ही उनका यह भी मानना है कि बड़े पैमाने पर इस तरह का स्वैच्छिक सहयोग असंभव है क्योंकि लोगों के सरोकारों के बीच अपने आप विरोध पैदा होगा और जिसका परिणाम हिंसा के अलावा और कुछ नहीं हैं।

इस तरह की आलोचनाओं की सबसे शुरूआती और संभवत: सबसे प्रभावी और प्रबुद्ध प्रस्तुति है 'दि रिपब्लिक', जो महान ग्रीक दार्शनिक प्लेटो ने दी है। तथाकथित वितंडावादी (सोफिस्ट), (इसे ज्यादातर अब एक अपशब्द माना जाता है – जिसका श्रेय जाता है प्लेटो द्वारा छेड़ी गई बहसों को जिसमें उनके विचारों/तर्कों की निर्मम चीड़-फाड़ की गई) की कई अवधारणाएं आज आद्य-उदारवाद (प्रोटो लिबर्टेरियन) के रूप में और यूनानी परिदृश्य में उभरती स्वतंत्रता, वाणिज्य व संयम (इसकी पूर्व प्रभुसत्ताओं और पड़ोसियों के सापेक्ष) का समर्थन करती दलीलों के रूप में देखी जा सकती हैं 'दि रिपब्लिक' की बुक-II में एडिमैन्टस और सुकरात ने बाजार के अभ्युदय, स्वैच्छिक समन्वयन और नागरिक समाज पर चर्चा की है। एडिमैन्टस ने अपने निष्कर्ष में कुछ इस प्रकार कहा है कि न्याय निर्भर करता है, 'उस जरूरत पर.... जो एक मनुष्य को दूसरे से होती है।'' (372ए)- इस दृष्टिकोण ने स्काटलैंड- प्रबोध (स्काटिश एनलाइटेन्मेन्ट) के विचारकों और डेविड ह्यूम पर छाप छोड़ी है। इस विचारधारा पर सवाल खड़ा करते हुए ग्लॉकन ने ऐसे शहर को "City of Sows" (372डी) कहा है। सुकरात ने जोर देकर कहा है कि ऐसे लोगों के मन में विलासिता की आकांक्षा से पड़ोसियों के साथ उनके संबंधों में दरार पड़ जाएगी, क्योंकि जो जमीन कल तक मौजूदा लोगों का पेट भरने के लिए वास्तव में पर्याप्त थी, आज कम पड़ जाएगी। हालांकि यह पर्याप्त है.... फिर भी हमें पड़ोसी की जमीन का टुकड़ा हासिल करना होगा – यदि हमें चारागाह और जुताई के लिए पर्याप्त जगह चाहिए, और फिर बदले में वे असीमित धन संचय की दौड़ में निकल पड़ेंगे और आवश्यकता से अधिक धन पाने की चाह में सारी सीमाएं तोड़ देंगे..... (और) उसके बाद, परिणामस्वरूप, क्या हम युद्ध के लिए खड़े न हो जाएंगे, ग्लॉकन?'' (372डी-ई) और युद्ध के साथ राज्य और स्वैच्छिक समाज का अंत हो जाएगा।

यह दलील, जो मनुष्य के उद्देश्यों और आकांक्षाओं को पूर्णत: समाधानहीन ठहराती है, उदारवाद के कई आलोचकों के चिंतन में भी भूमिका निभाती है- विशेषकर समूहवादी- जातीय और राष्ट्रवादी चिंतनों में, जिसके अनुसार विभिन्न जातियों और राष्ट्रों के हितों के बीच एक असमाधेय (जिसका हल न निकाला

जा सके) विरोध विद्यमान रहता है। यह उदारवादी दृष्टिकोणों के विरुद्ध उठी एक जोरदार आवाज साबित हुई है। लुडविग वान मिसेस की 'ह्यूमन ऐक्शन: ए ट्रीटीज ऑन इकोनॉमिक्स' (न्यू हेवन: येल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1949 और बाद के कई संस्करण) में उदारवादी प्रतिक्रिया दर्शाता एक बेहतरीन वक्तव्य मिलता है जिसमें कहा गया है कि न्यायसंगत व्यवहार के नियमों का अक्षरश: पालन होने पर मनुष्य के बीच सहयोग संभव है। खासकर उस दृष्टिकोण का आकलन जिसे मिससे ने ''सहसंबधन का रिकार्डियन नियम'' नाम दिया है, जो एडीमैन्टस द्वारा हजारों साल पूर्व प्रस्तावित सिद्धांत के पक्ष में रखी गई सबसे नई और परिष्कृत दलील है।

मिसेस लिखते हैं: ''आदमी को पशु मानव से इन्सान के रूप में बदलने और सभ्यता, समाज व सहयोग की स्थापना करने वाले आधारभूत तथ्य यह हकीकत बयान करते हैं कि श्रम विभाजन के अंतर्गत संपन्न कार्य अकेले किए गए कार्य से अधिक सुंदर परिणाम देने वाला है, और मनुष्य का विवेक इस सत्य को पहचानने में सक्षम है।'' पर इन्हीं वास्तविकताओं की वजह से प्रकृति द्वारा मुहैया पोषण के साधनों की दुष्प्राप्य आपूर्ति के अंश को हासिल करने की होड़ में मनुष्य हमेशा एक दूसरे का शत्रु बना रहेगा और उनके बीच एक कट्टर प्रतिस्पर्धा चलती रहेगी। हर इन्सान अन्य मनुष्यों का अपना दुश्मन समझने के लिए विवश होगा; अपनी ही इच्छाओं को पूरी करने की उसकी प्यास उसे अपने पड़ोसियों के साथ एक अड़ियल विवाद में उलझाए रखेगी। इस तरह की परिस्थितियों में सहानुभूति का कोई भी वातावरण विकसित नहीं हो सकेगा।

उदारवाद मनमुटाव और परमवाद को बढ़ावा देता है। इससे संबद्ध दावे का प्रामाणिक विवरण उदारवाद के प्रख्यात समालोचक कार्ल मार्क्स की रचना में मिलता है। मार्क्स ने अपने लेख ''ऑन दि जुईश क्वेश्चन'' में कहा है कि नागरिक समाज, जैसा कि उदारवादी मानते हैं, ''मनुष्य के अपघटन'' पर आधारित है, इस तरह कि मनुष्य की '' प्रकृति समुदाय में नहीं बल्कि भिन्नता में बसती है।''

अत: मनुष्य का वास्तविक जीवन सार पाने के लिए हमें उन वैयक्तिक अधिकारों पर जोर नहीं डालना जो एक मनुष्य को दूसरे से अलग दिखाते भर हैं, बल्कि राजनीतिक समुदाय की प्रधानता पर डालना है। जैसा कि मानवविज्ञानशास्त्री अर्नेस्ट केलनर ने अपनी पुस्तक 'कन्डीशन्स ऑफ लिबर्टी: सिविल सोसाइटी ऐंड इट्स राइवल्स' (न्यूयॉर्क: वाइकिंग पेंग्विन, 1994) में इंगित किया है, ''वास्तविक समाजवाद'' का अनुभव वह बोध है जो ''नवीन रूप से पुन: अपनी पूर्व स्थिति में वापस लौटे सामाजिक व्यक्ति की ओर नहीं ले जाता है, बल्कि पूर्ण व्यक्तिपरक जैसी अवस्था तक पहुंचाता है जिसके संबंध

में पहले का कोई समाज शायद जानता भी नहीं होगा। मार्क्सवाद की आलोचना में कई किताबें लिखी हैं लेकिन इस विचारधारा के दर्शन की (और मार्क्सवादी राज्यों की राजनीति मात्र ही नहीं, बल्कि धन के मूल्यों के बगैर आर्थिक गणना की असंभवता की भी) समीक्षा ब्रिटिश चिंतक एच.बी. एक्टन ने अपनी कृति 'दि ईल्युजन ऑफ दि इपॉक: मार्क्सिज्म- लेनिनिज्म ऐज ए फिलॉसोफिकल क्रीड' (1955; लंदन रूटलेज ऐंड केगान पॉल, 1972) में रखी है। (देखें बाजार विनिमयों की नैतिकता पर उनकी दलील दि मॉरल्स ऑफ मार्केट्स ऐंड रिलेटेड एसेज- डेविड गोर्डन और जेरेनी शियरमर संपादित; इंडियानापोलिस: लिबर्टी प्रेस, 1993) में उदारवाद की आलोचना दर्शाती एक विशेष महत्वपूर्ण पंक्ति है- मार्क्स द्वारा प्रस्तुत समालोचना से संबंधित- कि उदारवादियों ने स्वतंत्रता की प्रकृति को मूलतः सही तरीके से समझा ही नहीं है। इस बिन्दु को बेंजामिन कान्सटैन्ट ने अपने लेख में, जो इस संग्रह में शामिल है, पहले से ही काफी प्रचारित कर रखा था, पर चार्ल्स टेलर (नीचे जिनकी किताबों पर चर्चा हुई है) और अन्य समीक्षकों ने पुनः इस मुद्दे को उठाते हुए यह पक्ष रखा कि ''वास्तविक स्वतंत्रता'', इस बात से संबंधित है कि किसी मनुष्य में कितना ''आत्म-नियंत्रण'' (जैसे, अपने आवेशों पर) है या वह सामूहिक निर्णयों में भाग लेने में कितना सक्षम है, या उसके पास कितनी शक्ति या धन है ताकि वह अपने उद्देश्यों को हासिल कर सके, या अन्य ऐसे ही कारकों का जटिल सम्मिश्रण।

स्वतंत्रता के अर्थ के एक नए कलेवर के आधार पर पुनर्वितरणात्मक समाजवाद, और दूसरों पर जबरदस्ती मढ़े गए कर द्वारा समर्थित ''अधिकारों'', - व्यक्ति का काम से इनकार करने के बावजूद फिलिपी वैन पैरिज ने अपनी पुस्तक ''रियल फ्रीडम फॉर आल: व्हाट (इज एनिथिंग) कैन जस्टीफाई कैपिटलिज्म?' (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995) से संबद्ध हालिया दलील को विस्तार दिया है, जो ''वास्तविक स्वतंत्रता'' की आवश्यकता की आड़ में व्यक्ति के जान-बूझकर अकर्मण्य बने रहने को दूसरों द्वारा विवशतावश दिए गए चंदे से जीवन निर्वाह करने के अधिकार की वकालत करता है। सिर्फ ''औपचारिक स्वतंत्रता'' (जिसकी उदारवादी वकालत करते हैं) कथित तौर पर ''सुरक्षा'' व ''स्व-मिल्कियत'' में निहित है, लेकिन ''वास्तविक'' स्वतंत्रता ''अवसर'' का एक दूसरा नाम है। इस तरह दो व्यक्ति औपचारिक रूप से किसी झील में तैरने के लिए स्वतंत्र हो सकते हैं, पर जो अच्छा तैराक है वही ''वास्तव'' में ऐसा करने के लिए स्वतंत्र है, और यह 'वास्तविक' स्वतंत्रता ही मायने रखती है। इसी के समान विचार ऐलेन हावर्थ ने ऐन्टि- लिबर्टेरियनिज्म: मार्केट्स, फिलॉसफी ऐंड मिथ (लंदन: रूटलेज, 1994) में दिया है, जिसमें उन्होंने दावा किया है कि उदारवाद के रूप में जिस चिंतन को हम जानते हैं, दरअसल वह ''उदारवाद-विरोधी'', है क्योंकि यह ''वास्तविक'' स्वतंत्रता – प्रकट रूप में जिसके

साकार होने के लिए व्यापक बल प्रयोग की जरूरत होती है- का आनन्द उठाने का आश्वासन नहीं देती है।

हम यह वचन दे सकते हैं कि हम स्वतंत्रता का तात्पर्य किसी एक चीज से लेंगे न कि किसी अन्य से, साथ ही हम स्वतंत्रता का अर्थ शक्ति या धन या अच्छा चरित्र या ऐसे ही भिन्न-भिन्न शब्द समझेंगे, पर वस्तुस्थिति यह है कि हमारे पास इन सारे शब्दों के लिए पूर्णत: उपयुक्त नाम हैं (शक्ति, धन और अच्छा चरित्र) और यह कथन कि ''स्वतंत्रता'' उन चीजों में किसी एक को इंगित करने के लिए प्रयुक्त होगी, हमारे सामने न्याय की कठिन समस्याओं की जांच करने में नाममात्र ही मदद करेगा।

(स्वतंत्रता की प्रकृति क्या हो ? इस पर विभिन्न दृष्टिकोणों को शामिल कर लेखों का एक उपयोगी संग्रह डेविड मिलर द्वारा संपादित संस्करण के रूप में हमारे सामने आया है – 'लिबर्टी' (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991) उधर एफ.ए.हयाक '' दि कांस्टिट्यूशन ऑफ लिबर्टी'' में परंपरागत दृष्टिकोण के पक्ष में यह कहते हैं कि स्वतंत्रता दरअसल दूसरे मनुष्य की निरंकुश इच्छा की अधीनस्थता से मुक्त होना है। स्टीफन डरवाल ने 'इक्वल फ्रीडम' (ऐन आरबर: मिशिगन यूनिवर्सिटी प्रेस: 1995) नामक लेख-संग्रह प्रकाशित किया जिसमें उदारवाद की आलोचना पेश की गई है कि उदारवादी स्वतंत्रता और समानता को सही अर्थ में नहीं समझते। उन्होंने इशारा किया है कि स्वतंत्रता और समानता कभी-कभी परस्पर विरोधी अवधारणाएं नजर आती हैं, लेकिन 'कुछ लोग अपने इंद्रियजन्य ज्ञान के आधार पर यह मानते हैं कि स्वतंत्रता और समानता परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि परस्पर-निर्भर और परस्पर प्रबल बनाने वाली अवधारणाएं हैं। उदाहरण के लिए उदारवाद का केंद्रीय तत्व इस मत पर टिका है कि सभी व्यक्तियों को मिले समान प्राकृतिक अधिकारों – कि उनके 'जीवन, स्वास्थ्य, स्वतंत्रता और संपत्ति' (लॉक की उक्ति) को कोई नुकसान न पहुंचे- की वजह से सारे लोगों को एकसमान नैतिक दर्जा प्राप्त हुआ है। स्वतंत्रता, व्यापक रूप से जिसका अर्थ है उपरोक्त नुकसानों से मुक्त होना, समान दर्जे के लोगों (among equals) के बीच एक मूल्यवान चीज है; इसका बोध तब ही होता है जब हर व्यक्ति के अधिकारों को समान रूप से सम्मान मिलता है। अत: स्वतंत्रता के आदर्श स्वरूप को आगे बढ़ाने के लिए उदारवादी इसके साथ-साथ समानता का एक आदर्श भी सामने बढ़ा देते हैं। वे दोनों को न्याय की व्यापक परिकल्पना के पूरक पहलुओं के रूप में देखते हैं।'' उपरोक्त संग्रह में प्रख्यात समाजशास्त्री और सामाजिक-लोकतांत्रिक चिंतकों द्वारा लिखे गए लेखों को ''उदारवाद की समालोचनाओं के तौर पर पढ़ा जा सकता है,'' क्योंकि इसमें बताया गया है कि समानता और स्वतंत्रता की कुछेक वैकल्पिक धारणाएं उदारवाद की ''पूरक'' परिकल्पना से श्रेष्ठ हैं। ये तर्क सरल और विविध प्रकार के हैं और हर

एक पर अलग से प्रतिक्रिया मिलनी चाहिए, पर उदारवादियों द्वारा पेश की गई एक आम प्रतिक्रिया सही दिशा तक नहीं जा सकी: जब कुछ लोगों के पास अन्य सभी अवस्थाओं और संपत्तियों को ''समान बनाने'' की शक्ति होती है तो ऐसा करने की शक्ति रखने वाले लोग उन बाकी लोगों से, जो अब उनकी बराबरी के नहीं रहे, ज्यादा शक्तिशाली हो जाएंगे। स्वतंत्रता की समानता या नियम के समक्ष समानता, अवस्था की समानता को मढ़ने वाली शक्ति के अस्तित्व के साथ संगति नहीं बिठा सकती। यह समस्या बहुत मुखरता के साथ एफ.ए. हयाक की 'दि रोड टू सर्फडम' (शिकागो: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1944), खासकर ''टू हूम?'' और ''व्हाई दि वर्स्ट गेट ऑन दि टॉप'' अध्यायों में दिखाई देती है।

दार्शनिक और मार्क्सवादी सिद्धांतशास्त्री ऑक्सफोर्ड के जी.ए.कोटेन ने भी उदारवाद पर एक सरल समीक्षा प्रस्तुत की है, जो उनकी किताब 'सेल्फ-ओनरशिप, फ्रीडम ऐंड इक्वैलिटी' (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1995) में मिलती है। इसमें रार्बट नॉजिक के बारे में ज्यादा वर्णन हुआ है। (कोऐन की ज्यादातर दलीलें साधारणत: तकनीकी है और तर्कशीलता की प्रकृति, समझौता, सिद्धांत और विषयों से संबद्ध स्पर्धी दावों पर टिकी हैं। अत: यह वास्तव में उन पाठकों के लिए है जो नॉजिक के साथ ही जॉन लॉक को भी पढ़ चुके हैं और जिन्होंने समझौतापूर्ण और युक्तिपूर्ण संवाद के सिद्धांत पर लिखी किताबों का अध्ययन भी कर रखा है)।

राजनीतिशास्त्री विल किमलिका ने अपनी पुस्तक 'कन्टेम्पररी पॉलिटिकल फिलॉसफी: ऐन इन्ट्रोडक्शन' (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,1990) अध्याय-4 और समाजवादी राजनीतिशास्त्री अट्रैक्टा इन्ग्राम ने अपनी 'ए पॉलिटिकल थ्योरी ऑफ राइट्स' (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1994) पुस्तक में उदारवाद संबद्ध चित्रणों में उदारवाद के खिलाफ अन्य विचारकों की अभिव्यक्तियों के साथ-साथ कोहेने के तर्कों का भी मुख्य रूप से उल्लेख किया है। इन्ग्राम की कृति एक ऐसी शैक्षणिक पुस्तक का मानक सिद्ध हुई है जिसमें उदारवादी सिद्धांतशास्त्रियों के प्रति व्यक्तिगत नापसंदगी उनकी भर्त्सना और उनके लिए प्रयुक्त अपभाषा के जरिए उभर आई है।

उदारवाद की अवहेलना करते हुए कोहेन असहमति जताते हैं कि व्यक्ति की निजी संपत्ति (''स्व-मिल्कियत'') वियोज्य वस्तुओं (विश्व-स्वामित्व) की निजी संपत्ति प्रणाली की ओर अग्रसर करती है। (कोहेन व्यक्ति की निजी संपत्ति की अवधारणा को खारिज करते हैं, फिर भी बहस के मद्देनजर वह इसे मानने के लिए तैयार हैं) 'सेल्फ ओनरशिप फ्रीडम ऐंड इक्वलिटी', में कोहेन ने ''बाल जगत के लिए नॉजिक की 'अप फॉर ग्रैब्स' परिकल्पना के विकल्प को युक्तिकौशल की जगह चुना है, जिस पर

प्रत्येक का हक होता है और हर व्यक्ति को इसके संभावित उपयोग का वीटो प्राप्त होता है। और मैंने दिखाया है कि जब बाह्य संसाधनों के स्वामित्व से संबंधित समतावादी परिकल्पना स्व-मिल्कियत की संकल्पना के साथ संयुक्त हो, तो अवस्था की निर्णायक समानता सुनिश्चित हो सके।" (पृ.14) इस प्रक्रिया में, हालांकि समझौता सिद्धांत के संबंध में कोहेन कई गलतियां करते हैं (वह यह मान कर चलते हैं कि निश्चित परिणामों वाली एक सर्वथा अलग तरह की तर्कसंगत समझौता युक्ति होती है) और उन परिदृश्यों में घाल-मेल कर देते हैं जिसका उन्होंने वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त यह भी उल्लेखनीय है कि कोहेन ने इस दलील को उचित नहीं ठहराया है कि विश्व का हर संसाधन "संयुक्त रूप से हर व्यक्ति के निजी अधिकार में होता है और प्रत्येक को इसके संभावित प्रयोग पर वीटो प्राप्त होता है, इस विचार को जॉन लॉक द्वारा सैकड़ों साल पहले अनुचित ठहरा दिया गया था। उन्होंने अपनी पुस्तक 'सेकेंड ट्रीटीज ऑफ गवर्नमेंट' के खंड-28 में लिखा है "यदि ऐसी सहमति अनिवार्य होती तो मानव जाति भूखों मर जाती, ईश्वर द्वारा पर्याप्त से भी ज्यादा दिए जाने के बावजूद।" दार्शनिक जैन नैवरसन ने कोहेन के कुछ तर्कों के प्रति अपनी किताब 'दि लिबर्टेरियन आइडिया' (फिलाडेल्फिया: टेम्पल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1988) में प्रतिक्रिया दर्शायी है। ऐसा ही डेविड गोर्डन ने अपनी 'रिसरेटिंग मार्क्स: दि एनालिटिकल मार्क्सिस्ट ऑन फ्रीडम, एक्स्प्लायटेशन, ऐंड जस्टिस' (न्यू ब्रंजविक: न्यू जर्सी: ट्रांजैक्शन बुक्स, 1990) में पेश किया है।

हर व्यक्ति की अपनी संपत्ति होती है, इस दावे का खंडन करते हुए दार्शनिक रिचर्ड आर्नेसन के लेखों के संकलन "लॉकियन सेल्फ ओनरशिपः टुवाड्र्स अ डिमोलिशन" (पालिटिकल स्टडीज खंड XXXIX, 1991) में जोर देकर कहा गया है कि "स्व-मिल्कियत इतनी निश्चित नहीं है जितनी कि प्रतिस्पर्धी परिकल्पनाएं " (एक दोहरा और असमर्थित दावा) और यह भी कहा कि "यह स्पष्ट है कि स्व-मिल्कियत मानवता की सबसे अल्प जरूरतों के साथ भी विरोध दर्शाती है।" (यह भी असमर्थित है पर इस बात का प्रमाण है कि आर्नेसन सहज व्यवस्था की संभावना के उदारवादी दृष्टिकोण को नहीं मानते।) अपने दूसरे लेख " प्रॉपर्टी राइट्स इन पर्सन्स" (सोशल फिलॉसफी ऐंड पॉलिसी- खंड-9 , क्र.1, 1992) में वह तर्क रखते हैं कि " समतावादियों को इस तर्क के साथ सहमति जतानी चाहिए कि क्षैतिज निष्पक्षता को संभवतः बलात् श्रम की जरूरत हो सकती है यदि जरूरतमंद को मदद के लिए पुनर्वितरण प्रणाली मौजूद हो "और यह भी कि" बलात् श्रम को शासन नीति में नैतिक स्वीकृति मिल सकती है।" जैसा आर्नेसन ने गौर किया है, स्व-मिल्कियत की बहाली के मापदंडों की समीक्षा कर कल्याणकारी-राज्य उदारवाद और समाजवाद स्वामी और दास संबंधों के नैतिक समतुल्य को शामिल करते दिखते हैं।

समतावादी कल्याणवादी की प्रतिक्रिया के अनुसार सामंतवाद का उन्मूलन नैतिक रूप से विकासकारी है क्योंकि सामंतवाद के लक्षण हैं- निजी संपत्ति संबंध, जो अभावग्रस्त लोगों से संसाधनों को लेकर पहले से ही लाभप्रद स्थिति में रह रहे लोगों को देने की प्रक्रिया को तय करते हैं। कल्याणकारी-राज्य उदारवाद और समाजवाद द्वारा व्यक्तियों को दिए गए संपत्ति के निजी अधिकारों, जो सतही तौर पर तो एकसमान दिखते हैं पर नैतिक रूप से अहम मायनों में भिन्न नजर आते हैं, (जब तर्कसंगत रूप से व्यवस्थित होते हैं) वे संसाधनों का समृद्ध लोगों से अभावग्रस्त लोगों में हस्तांतरण करते हैं।

वे समृद्ध व्यक्ति से अभावग्रस्त व्यक्ति को संसाधन हस्तांतरित करते हैं। आर्नेसन की ईमानदारी प्रशंसनीय है। हालांकि वह इस बात की ओर इशारा नहीं करते कि वैसी स्थिति में क्या होता है जब कल्याणकारी-राज्य उदारवाद और समाजवाद द्वारा संस्थापित व्यक्ति के निजी संपत्ति अधिकार तर्कसंगत रूप से व्यवस्थित नहीं होते। न ही यह बात ही स्पष्ट होती है कि हम शक्ति और हिंसा की ऐसा प्रणालियों के सिलसिलेवार ढंग से व्यवस्थित होने की अपेक्षा क्यों रखते हैं जिसे वे तरजीह देते? (यह उदारवादविरोधी विचारकों को अक्सर मिली इस असफलता को दिखाता है कि वे उद्देश्यों और परिणामों के बीच अंतर नहीं निकाल सकते। यह सरल अंतर, सही मायने में वैज्ञानिक समाजशास्त्र की तरह उदारवादी राजनीतिक अर्थव्यवस्था की कसौटी है।

प्रख्यात ब्रिटिश शिक्षाविद् रेमंड प्लांट अपनी किताब 'मॉडर्न पालिटिकल थॉट' (ऑक्सफोर्डः ब्लैकवेल 1991) में राजनीतिक चिंतन के मौजूदा मुद्दों की समीक्षा के दौरान उदारवादी विचारकों को भी शामिल करते हैं और बड़े दिलचस्प तरीके से रूढ़िवादी और समाजवादी विचारधाराओं के साथ उदारवादी दृष्टिकोणों के बीच का भेद दिखाते हैं। नॉर्मन पी. बैरी की 'ऐन इंट्रोडक्शन टू मॉडर्न पॉलिटिकल थ्योरी' (तृतीय संस्करणः लंदनः मैकमिलन 1995) भी उदारवादी दृष्टिकोणों को आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में रखती है। (दोनों ही न सिर्फ उदारवादी दृष्टिकोणों बल्कि दूसरे दृष्टिकोणों को भी, भले ही वे निजी तौर पर सहमत न हों, राजनीतिक सिद्धांत की अधिकतर शुरुआती कृतियों से कहीं अधिक ईमानदारी से प्रस्तुत करते हैं।) अल्बर्ट हर्स्चमन की 'दि रिटॉरिक ऑफ रिएक्शन पर्वसिटी, फ्यूटिलिटी ज्योपार्डी' (कैम्ब्रिज, मासः हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1991) नामक कृति उद्देश्यों और परिणामों के बीच के परंपरागत उदारवादी भेद को चुनौती देती है और तर्क-वितर्क का जैसे एक कोश हमारे सामने खोल देती है। हर्स्चमन की यह किताब अत्यधिक अलंकारिक है और इसमें विविध दृष्टिकोणों को एक ही कूची से सजाया गया है। अतः यह कृति प्रधान रूप से उदारवाद पर नहीं बल्कि दलील के स्वरूपों पर है कि ''अच्छे परिणाम'' हमेशा ''अच्छे प्रयोजनों'' से नहीं जन्म लेते।) शायद इस दृष्टिकोण का सबसे

बढ़िया ''खंडन'' यह है कि बस उन अनेक अंतःदृष्टियों की ओर उंगली उठाए जो कार्यों के अनचाहे परिणामों को ध्यान में रखते हुए प्राप्त किए गए हों। इस संग्रह का ''व्हाट इज सीन ऐंड व्हाट इज नाट सीन'' नामक लेख प्रयोजनों और परिणामों में भेद न करने वालों के प्रति एक अच्छी प्रतिक्रिया है। समुदाय और वैयक्तिक स्वतंत्रता के कथित टकराव से संबद्ध विषय को उदारवाद के आधुनिक ''समुदायवादी'' समीक्षकों ने स्पष्टता से व्यक्त किया है। ''समुदायवाद'' एक ऐसा शब्द है जो उन लोगों द्वारा शायद ही पसंद किया जाता है जिनके लिए इसे प्रयुक्त किया गया है, फिर भी यह अनेक विचारकों को एक समूह में लाने का उपयोगी साधन है। हालांकि उन्हें अन्य संदर्भों में ''वामपंथी'' और ''दक्षिणपंथी'' माना जा सकता हैं, तो भी आम तौर पर वे नैतिक व्यक्तिवाद को खारिज करते दिखते हैं और समुदाय की प्रधानता पर जोर देते हैं जिसका तात्पर्य निःसंदेह राज्य होता है। प्रख्यात समुदायवादी चार्ल्स टेलर ने अपने लेखों ''ऐटमिज्म'' और '' व्हाट्स रौंग विद निगेटिव लिबर्टी '' (दोनों ही उनकी पुस्तक 'फिलॉसफी ऐंड दि ह्यूमन साइंसेज़ः फिलॉसफिकल पेपर्स (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1985, पृष्ठ 187-210 और 211-29 में मौजूद हैं।) में उदारवाद की सीधी आलोचनाएं परोसी हैं। विभिन्न आलोचनाओं के बीच टेलर का तर्क यह है कि स्वतंत्रता को एक क्षमता के रूप में समझा जाना चाहिए, न कि अन्य लोगों के साथ संबंध के रूप में और ऐसी क्षमता की पूर्व शर्त यह है ऐसे समाज का हिस्सा बनना जो इस क्षमता का पोषण कर सके। इस दावे को वे ''सामाजिक शोध'' कहते हैं। इस तरह ''अधिकारों की प्रमुखता पर दृढ़ रहना असंभव हैः क्योंकि उन अधिकारों पर दृढ़ रहने का मतलब है- क्षमताओं को स्वीकार कर लेना और इसके मद्देनजर कि इन क्षमताओं से संबद्ध सामाजिक शोध सही है, यह हमें संबद्ध होने की बाध्यता के लिए प्रतिबद्ध करता है। ''यह राज्य की घोषणाओं, नियंत्रणों और करों को मान लेने की बाध्यता को जन्म देता है। इस लेख में कई अतर्कसंगत वक्तव्य हैं लेकिन उनमें सबसे उल्लेखनीय दावा यह है कि राजनीतिक समाज के प्रति समर्पण चयन की क्षमता के विकास के लिए आवश्यक है। बेशक वे समुदायवादी प्रतिष्ठान के जानकार ऐतिहासिक समीक्षक के लिए एक सुराख छोड़ देते हैं। (इतिहास उदारवाद के समुदायवादी समीक्षकों के लिए शायद ही कोई सशक्त मसला रहा है जो ऐतिहासिक घटनाओं की वास्तविक जानकारी की जगह पूर्व विवेचित चिंतन को जगह देते हैं।) टेलर का मानना है, ''ऐसा संभव है कि कोई समाज और संस्कृति जो स्वतंत्रता के अनुकूल हो, अराजकवादी समुदायों के सहज साहचर्य से उभरी हो। लेकिन ऐतिहासिक अभिलेख हमें यह इशारा देते हैं कि शायद हमें राजनीतिक समाज के कुछ वर्गों की जरूरत होगी।'' मध्ययुगीन इतिहासकारों ने कितनी बार इशारा किया कि प्रेसाइजली यूरोप के क्रांतिकारी (''अराजकवादी'' यदि आप कहें तो,) समुदायों के बीच स्वतंत्रता और व्यक्तिवाद विकसित हुआ था (हेनरी पीरीन की 'मीडिएवल सिटीजः देयर ओरिजिन्स ऐंड दि ग्रोथ

ऑफ ट्रेड' जो खंड-II में उद्धृत हुई है, इसकी शुरुआत के लिए एक अच्छा बिंदु है। लेकिन यूरोपीय इतिहास पर लिखी कई अन्य किताबें एक ही कहानी दुहराती हैं।) इतिहसकार एंटनी ब्लैक ने अपनी 'गिल्ड्स ऐंड सिविल सोसाइटी' (इथाका, एन.वाईः कार्नेल यूनिर्वसिटी प्रेस 1984) में लिखा है कि "आरंभिक काल के नगरों की जनसभाओं में कम्यून शब्द का इस्तेमाल उनकी स्वतंत्रता की वकालत करने के नारे के रूप में हुआ।" पृष्ठ-49 और, " संघों व समुदायों, दोनों से संबंधित अहम बिंदु यह था कि यहां इंडिविजुएशन ऐन एसोसिएशन वेंट हैंड इन हैंड । इस तरह के समूह का हिस्सा बनकर (बिलौंगिंग टू) ही किसी व्यक्ति को स्वतंत्रता मिलती थी।" पृष्ठ-65। विजय की बुनियाद पर खड़े महान राज्यों-साम्राज्यों से स्वतंत्रता का जन्म नहीं हुआ बल्कि स्वतंत्र रूप से दी हुई सहमति पर आधारित संघों, समुदायों और अन्य संगठनों से हुआ।

समुदायवादी आलोचना का आम सारांश यह है कि व्यक्तियों का निर्माण समुदायों ने किया है, न कि समुदाय का व्यक्ति का और व्यक्ति का निर्माण करने वाले कारकों में शामिल हैं उनकी बाध्यताएं। अतः किन्हीं खास बाध्यताओं को चुनने के बजाय हमारे पास निर्धारित बाध्यताएं हैं- जाति, वंश, राष्ट्र या राज्य के प्रति बाध्यताएं- और हम इनके द्वारा बनाए गए नैतिक प्रतिनिधि हैं। इस दृष्टिकोण को हावर्ड दार्शनिक माइकल सैंडेल ने अपनी 'लिबरिज्म ऐंड दि लिमिट्स ऑफ जस्टिस (कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस 1982) कृति में सशक्त रूप से रखा है। यह पुस्तक दो सामाजिक लोकतांत्रिक "उदारवादियों" जॉन रॉल्स और रोनॉल्ड डोर्किन की समीक्षा है और मोटे तौर पर उनके दृष्टिकोणों के उदारवाद-विरोधी समुदायवादी आधारों को दर्शाती है कि किस तरह वे उदारवादी व्यक्तिवाद के तत्वों के साथ मेल नहीं बैठा पाते जिनका वे समर्थन करते हैं। सैंडेल यह तर्क रखते हैं कि चूंकि "हमारे अस्तित्व के लिए साझा समझदारी आवश्यक है और इसमें किसी अकेले व्यक्ति के बनिस्पत व्यापक विषय को समाविष्ट किया जाता है- चाहे वह परिवार हो, या जाति, या शहर, या वर्ग, या राष्ट्र, या लोग। उनकी नजर में इसकी अहमियत इतनी अधिक है कि उन्होंने समुदाय को एक आवश्यकता के रूप में परिभाषित किया है।" व्यक्तिवाद मूलतः भ्रामक है और यह कि "स्व की सीमाएं तय नहीं हैं, इसे कुछ पहले ही व्यक्तिकृत कर दिया गया था और आजमाने से पहले ही प्रदान कर दिया गया।" इसका अर्थ यह है कि "स्व" का तात्पर्य संख्यात्मक तौर पर व्यक्तिकृत किया गया जैविक व्यक्ति नहीं (बिल, या मैरी या सैमुअल या जेनेट) बल्कि "स्व" इन सारे लोगों से बना शब्द है। इस तर्क का खंडन दार्शनिक जॉन जे. हैल्डेन ने " इंडिविजुअल्स ऐंड दि थ्योरी ऑफ जस्टिस" (रेशियो, खंड 27, क्र- 2 दिसंबर 1985) में किया है जिसमें सीधे तौर पर इस बात की वकालत की गई है कि लक्षणों की साझेदारी तभी की

जा सकती है जब वे उन धारकों से जुड़े हों जो बुनियाद पर संख्यात्मक रूप से विविध हों। सैंडेल द्वारा समूहवाद या (पूर्णवाद) की ओर लिया गया ज्ञान मीमांसक मार्ग 13वीं सदी में ही अपना लिया गया था। (''लैटिन एवरोइस्ट'' द्वारा जैसे सिगर ऑफ ब्रैबांट और थॉमस एक्विन्स द्वारा भी अवरुद्ध कर दिया गया था जिन्होंने व्यक्तिवाद के पक्ष में अपनी बात कहते हुए नैतिक और तात्विक व्यक्तिवाद के मसले को अपनी पुस्तक 'ऑन दि यूनिटी ऐंड दि इंटलेक्ट अगेन्स्ट दि एवरोइस्ट्स' (मिलवाउकीः मिलवाउकी यूनिवर्सिटी प्रेस 1968) में उठाया है। उन्होंने मानव जाति के पास 'बस एक बुद्धि है, या एक आत्मा' मत के नजरिये से वस्तुतः उसी दलील का खंडन किया है। थॉमस ने इस बात की वकालत की है कि समझदारी या विचारों का कई लोगों के साथ साझा किया जा सकता है। इसके लिए हमें इन विचारों को रखने वाली किसी बुद्धि के बारे में तथ्यों को मानना आवश्यक नहीं होता। उन्होंने यह भी कहा कि यह धारणा ''बेतुकी है और मानव जीवन के विपरीत है (क्योंकि सलाह लेना या नियम बनाना जरूरी नहीं।),'' अतः ''ऐसा मानना है कि बुद्धि हममें कुछ इस तरह समाहित है कि वह और हम मिलकर सही मायने में एक मनुष्य के अस्तित्व की स्थापना कर देते हैं।''

समाजशास्त्री और राष्ट्रवादी विचारक ऑक्सफोर्ड के. डेविड मिलर, जिन्होंने हयाक के दावे का समर्थन किया है कि समाजवाद और शक्तिशाली, कल्याणकारी राज्य जो जातिवाद और विश्वबंधुवाद-विरुद्ध बुनियाद पर खड़े हैं, ने समुदायवादी दलील को और भी विकसित किया है। मिलर अपनी किताब 'ऑन नेशनैलिटी' (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1995) में उल्लेखनीय रूप से समाजवादी या पुनर्वितरणात्मक राज्यों की बाध्यताओं के कारणों के रूप में देखे जा रहे राष्ट्रीय '' मिथकों'' (प्लेटो की '' नोबेल लाइज़'' सदृश) के प्रसार का विरोध करते हैं। मिलर लिखते हैं ''समाजवादियों द्वारा समर्थित पुनर्वितरणात्मक नीतियों को यदि लोक सहमति जीतनी है तो उन्हें संभवतः एक विशेष स्तर की सामाजिक अखंडता की मांग रखनी होगी और ऐसी अखंडता को राजनीतिक रूप से प्रभावी बनाने के संस्थान के तौर पर राष्ट्र-राज्य के प्रति उन्हें परंपरागत उदारवादियों की बनिस्बत ज्यादा प्रतिबद्ध होना पड़ेगा। ''इस राष्ट्रवादी रुख के प्रति इस स्पष्ट प्रतिक्रिया का ध्येय 20वीं सदी के राष्ट्रवाद और समूहवाद की त्रासदी दर्शाना भर है पर इससे जुडे गहन चिंतन भी उपलब्ध हैं जो राष्ट्रवाद के बुरे परिणामों का ब्योरा हमारे सामने पेश कर सकते हैं। इनमें उल्लेखनीय है एली केडुरी कृत 'नेशनलिज्म' (चौथा संस्करण; ऑक्सफोर्डः ब्लैकवेल, 1993) जो राष्ट्रवाद के दर्शन की कड़ी आलोचना करती है। राष्ट्रवादी और समाजवादी विचारधारा के एक और समीक्षक हैं आस्ट्रियाई अर्थशास्त्री लुडविग वान मिसेस, जिन्होंने 'नेशन, स्टेट ऐंड इकोनॉमी' (1919; न्यूयॉर्क, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी प्रेस 1983) रचना में इस बात की

वकालत की है कि विभिन्न राष्ट्रों और संस्कृतियों का अस्तित्व समाजवादी या कल्याणकारी-राज्यवादी लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रवादी एकरूपता मढ़ने के बजाय राज्य को सीमित (लिमिटिंग) करने की दलील खड़ी करता हैः "जो भी राष्ट्रों के बीच शांति की कामना करता है उसे राज्य और इसके प्रभाव को अत्यंत कड़ाई से सीमित करने की इच्छा रखनी चाहिए।"

साधारणतः "समुदायवादी " विषय को उदारवाद के " दक्षिणपंथी " समालोचकों ने समर्थन दिया है, हालांकि वे शायद ही कभी "वामपंथी" समुदायवादी समीक्षकों द्वारा अक्सर व्यक्त की गई उक्तियों के स्तर तक जाकर अपने तात्विक पूर्णवाद की व्याख्या करते हैं। (उल्लेखनीय है, उदारवादी आम तौर पर "दक्षिण-वाम" द्विविभाजन के प्रस्ताव को खारिज कर देते हैं जो सबसे आसान विकल्प है और यह आत्म-अभिन्न "वाम" और "दक्षिण" द्वारा उदारवाद की आलोचनाओं में परिलक्षित होते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के अमेरिकी रूढ़िवाद पर अपनी पांडित्यपूर्ण समीक्षा के लिए प्रख्यात विभूति हैं रसेल कर्क, जिन्होंने अपने लेख "लिबर्टेरियन्सः दि चर्पिंग सेक्रेटरीज़" (जॉर्ज डब्लू. कैरी संपादित 'फ्रीडम ऐंड वर्चूः दि कंजर्वेटिव/ लिबर्टेरियन डिबेट' (लेन्हम, एमडीः यूनिवर्सिटी प्रेस ऑफ अमेरिका, 1984) में उदारवाद पर तीक्ष्ण तर्कपूर्ण और कभी-कभी निजी कटाक्ष भी किया है। इस पुस्तक में शामिल कई लेख उदारवादियों और रूढ़िवादियों में अंतर करने वाले मुद्दों पर आधारित हैं। वैसे यह कभी भी पूर्णतः स्पष्ट नहीं हुआ कि "रूढ़िवाद" अमेरिकी राजनीति में क्या अर्थ रखता है। अतः यह गौरतलब है कि कर्क के लेख कम से कम एक रूढ़िवादी दृष्टिकोण तो पेश करते ही हैं जो आभासी तौर पर हर संदर्भ – व्यक्ति के महत्व से लेकर व्यवस्था की जड़ों और राज्य की प्रकृति तक- में उदारवादी दृष्टिकोण से अलग है। कर्क और अन्य रूढ़िवादियों ने अक्सर एडमंड बर्क को उदारवादी आदर्शों के विरोधी के रूप में उद्धृत किया है, लेकिन बर्क ज्यादा जटिल हैं और एक सामान्य पाठक भी यह देख सकता है कि वह वैयक्तिक स्वतंत्रता और नागरिक समाज की परंपरागत उदार और उदारवादी समझ के खास रूप को विकसित कर रहे हैं। इसको विस्तार से समझने की जरूरत है क्योंकि बर्क ने अपनी एक किताब 'रिफ्लेक्शन्स ऑन दि रिवॉल्यूशन इन फ्रांस' से ही लोगों के मन में एक खास छवि बना रखी है। इस किताब में कई विद्वतापूर्ण उदारवादी अंतर्दृष्टियां हैं, पर साथ ही वास्तव में कुछ बेतुके वक्तव्य भी हैं, जिनका बाद के पाठकों ने अपने हिसाब से मूल्यांकन किया। उनके बेतुके और झेंपाने वाले वक्तव्यों में शामिल है फ्रांस की रानी का वर्णन; "श्योरली नेवर लाइटेड ऑन दिस ऑर्ब, विच शी हार्डली सीम्ड टू टच, अ मोर डिलाइटफुल विजन...लिटिल डिड आई ड्रीम दैट आई शुड लिव टू सी सच डिसासटर्स फॉलेन अपऑन हर इन अ नेशन ऑफ गैलेन्ट मेन, इन अ नेशन ऑफ मेन ऑफ ऑनर् ऐंड ऑफ

कैवेलियर्स। आई थॉट टेन थाउसैंड सोर्ड्स मस्ट हैव लिप्ड फ्रॉम देयर स्कैबार्ड्स टू अवेन्ज इवेन अ लुक दैट थ्रेटेन्ड हर विद इन्सल्ट- बट दि एज ऑफ शिवलरी इज़ गॉन-दैट ऑफ सॉफिस्टर्स, ऑर इकोनॉमिक्स ऐंड कैलकुलेटर्स ऐंड दि ग्लोरी ऑफ यूरोप इज़ एक्सिटिंग्वश्ड फॉरएवर। "यह अलंकारिक अतिरेक बर्क के लिए निश्चित तौर पर एक झेंपाने वाली याद है। लेकिन इस तरह के कुछ बेकार उद्धरणों से फ्रांस की घटनाओं पर की गई उनकी अद्भुत समीक्षा को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता- चाहे वह चर्च की संपत्ति को जब्त करना हो या राज्यों को विरासत में मिले हुए कर्जों के लिए दी जाने वाली वित्तीय सहायता हो या सोने और चांदी की जगह कागजी मुद्रा का इस्तेमाल। बर्क ने अमेरिकी क्रांति के पक्ष में दलील दी है कि वह अमेरिका के ऐतिहासिक तौर पर स्थापित अधिकारों की रक्षा का एक जरिया था जबकि फ्रांस की क्रांति के साथ ऐसा नहीं था। फ्रांस की क्रांति के संबंध में बर्क की आलोचना का केंद्रीय कारण था- अमूर्त अधिकार या शुद्ध अमूर्त संदर्भों द्वारा उपयुक्त ठहराए गए अधिकारों के प्रति उनकी आपत्ति, जो ऐतिहासिक रूप से स्थापित अधिकारों के प्रति उनके नजरिये से भिन्न थी। 1688 की इंग्लैंड की क्रांति के बचाव में रिफ्लेक्शन्स में बर्क ने लिखा है "यह क्रांति हमारी ऐंटिएंट निर्विवाद नियमों और स्वतंत्रता के संरक्षण के लिए हुई थी, और सरकार का ऐंटिएंट संविधान हमारे नियम और स्वतंत्रता की सुरक्षा का आश्वासन है। "जैसा कि उन्होंने इशारा किया है, इंग्लैंड के महान विधिवेत्ता "हमारी स्वतंत्रता के वंश वृक्ष को सिद्ध करने में लगे हुए हैं। "जो अधिकार केवल अमूर्त रूप से ही निर्धारित हैं ("जैसे मनुष्य के अधिकार"), अमूमन उनके स्थायी होने और स्वतंत्रता सुनिश्चित करने की संभावना उन अधिकारों से कम है जिनकी "वंशावली है" जो समय के साथ उभरते आए हैं और एक वैध परंपरा के द्योतक हैं और स्वतंत्र लोगों की विरासत के रूप में स्थापित किए गए हैं। इस दावे का खंडन जो चाहे कर सकता है लेकिन आधुनिक उदारवाद के विकास के साथ यह एकरूप बना रहा और इसने महत्वपूर्ण योगदान भी किया। (कॉनर क्रूइज़ ओ' ब्रायन्स द्वारा प्रकाशित जीवनी 'दि ग्रेट मैलोडीः ए थिमैटिक बायोग्राफी ऑफ एडमंड बर्क' (शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस 1992) में बर्क को एक उदारवादी के रूप में चित्रित किया गया है। इसके साथ ही बर्क के संबंध में एक विशुद्ध रूढ़िवादी व्याख्या उनकी 1756 की कृति 'अ विंडिकेशन ऑफ नैचुरल सोसाइटी' (फ्रैंक एन. पेगैनो द्वारा संपादित; इंडियानापोलिसः लिबर्टी क्लासिक्स 1982) के बारे में प्रस्तुत की गई है जो रूढ़िवादी-राज्यवादियों के अनुसार न तो राज्य के संबंध में एक विचारोत्तेजक समीक्षा है और न ही राज्यवाद विरोधी चिंतन का मखौल है। जेम्स फिट्जेम्स स्टीफन्स की 'लिबर्टी, इक्वैलिटी, फ्रैटरनिटी' (1783; इंडियानापोलिसः लिबर्टी क्लासिक्स 1993) में उदारवादी अवधारणा के संबंध में एक प्रभावी रूढ़िवादी आलोचना व्यक्त हुई है कि राज्य को दूसरों को स्पष्टतः परिभाषित नुकसानों से बचाने

के लिए प्रतिबद्ध रहना चाहिए और ''नैतिकता को कानून का रूप '' नहीं देना चाहिए। यह किताब बलप्रयोग को नैतिकता और धर्म का आधार मानकर उसकी वकालत करती है। यह अवधारणा कि नैतिकता को बहाल करने के लिए बलप्रयोग की गैरमौजूदगी में मनुष्य दंगे-फसाद में उलझ जाएगा और यह कि राज्य शक्ति का उद्देश्य ''मनुष्य को नैतिक बनाना है- जैसे मसलों की भी वकालत प्रिंस्टन के रूढ़िवादी दार्शनिक रॉबर्ट जॉर्ज ने 'मेकिंग मेन मॉरेलः सिविल लिबर्टीज़ ऐंड पब्लिक मॉरैलिटी' (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1993) में की है। जॉन स्टुअर्ट मिल की दलीलों (इस पुस्तक में संकलित अंशों को देखें) के अलावा उन्मूलनवादी और आत्मसंयमी वकील लाइजेंडर स्पूनर के 1875 के लेख ''वाइसेज़ आर नो क्राइम्स'' (जॉर्ज एच. स्मिथ संपादित दि लाइंजेंडर स्पूनर रीडर-सैन फ्रैंसिस्कोः फॉग्स ऐंड बिल्कीज 1992) में नैतिकता पर उदारवादी दृष्टिकोणों की वकालत की गई है। इसके अतिरिक्त समाज पर नैतिकता को मढ़ने के प्रयासों के भयावह परिणामों (काला बाजारों की विकृत धनसंचय प्रवृत्ति हिंसात्मक अपराधों में वृद्धि, उग्र अपराधियों को पकड़ने के लिए अपर्याप्त पुलिस संसाधन, पुलिस विभाग में भ्रष्टाचार इत्यादि।) पर अत्यंत उत्कृष्ट अध्ययन भी उपलब्ध हैं जो बल और दंडात्मक कार्रवाई द्वारा थोपे गए नैतिक प्रतिमानों का विरोध करने के लिए पर्याप्त कारणों को समाज के समक्ष रख रहे थे। ये सब कुछ उस समय की रचनाओं में उत्कृष्टता के साथ वर्णित हैं। उनमें नैतिकता का पोषण करने के लिए उदाहरण और विनय का माहौल तैयार करने पर जोर डाला गया था। इनमें उल्लेखनीय हैं डेविड डब्लू. रासम्यूसेन और ब्रूस एल. बेंसन की 'दि इकोनॉमिक एनाटॉमी ऑफ अ ड्रग वार' (लैनहैम, एमडी, रोमन ऐंड लिटिल फील्ड 1994) जिसमें यह दिखाया गया है कि किस तरह निषिद्ध माहौल में भी संगठित अपराध विकसित होता है और यह भी दिखाया गया है कि कैसे और क्यों अल्कोहल निषेधाज्ञा रद्द कर देने के बाद लगातार सात साल तक कत्ल की दर कम हो गई थी; रोनॉल्ड हैमोवी द्वारा संपादित 'डीलिंग विद ड्रग्सः कंसीक्वेन्सेज़ ऑफ गवर्नमेंट कंट्रोल' (कैम्ब्रिज, मासः बैलिंगर 1987) इसमें विद्वानों, अभियोजकों और नशीले पदार्थों पर रोक का विरोध करने वालों के लेख शामिल हैं; रिचर्ड कोज़नर की 'सेक्स ऐंड रीज़न' (कैम्ब्रिज, मासः हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1992) कृति में एक प्रख्यात न्यायाधीश और विधि व्याख्याता व्यापक रूप से उपयोगितावादी आधारों पर यह दलील पेश करता है कि वैयक्तिक अधिकार और स्व-मिल्कयत को कानून बना देना चाहिए; रिचर्ड इप्सटाइन की 'बार्गेनिंग विद दि स्टेट' (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस 1993) उन समस्याओं की जांच करती है जो राज्य सत्ता द्वारा चुनिंदा तौर पर लाभों और बोझों, और जनमतों और निषेधों के वितरण से उभरते हैं।

निष्कर्षः

कोई भी सूची या लेख उदारवादी विचारकों द्वारा प्रस्तुत अंतर्दृष्टि के वैभव के साथ न्याय नहीं कर सकता। परीक्षण इस बात का नहीं है कि उन्होंने कितना लिखा है, बल्कि इस तथ्य का है कि उनके विचार विश्व को समझने के हमारे प्रयासों में कितनी मदद करते हैं और जीवन को गरिमा, न्याय, दया और मानवीय भावनाओं के साथ जीने की हमारी कोशिश का मार्गदर्शन करते हैं। इन्हीं मानकों के आधार पर मूल्यांकन कर मैं यह मानता हूं कि उदारवाद अन्य सिद्धांतों या क्रमबद्ध मतप्रणालियों से उत्कृष्ट है। पर आप मुझसे सहमत हैं या नहीं, इसका निर्णय आप स्वयं लें।

टॉम जी. पामर कैटो इंस्टीट्यूट में विशिष्ट परियोजना निदेशक, हर्टफोर्ड कॉलेज (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी) में एच.बी. अर्हार्ट अध्येता और जॉर्ज मैसन यूनिवर्सिटी के इंस्टीट्यूट ऑफ ह्यूमन स्टडीज़ में राजनीतिक सिद्धांत के अध्येता हैं।